Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

सिद्ध नवनाथ एवं नाथपंथ

डॉ0 अरुण कुमार त्रिपाठी
(तिघरा, नगहरा, बस्ती)
48/18 HIG योजना – 2 झूँसी
इलाहाबाद– 211019

सारांश– प्रस्तुत शोधपत्र में नाथपंथ के नवनाथ को चिन्हित करके उनके जीवन दर्शन पर प्रकाश डाला गया है। नाथपंथ के सिद्धों का चरित्र आध्यात्मिक शुचिता एवं मानवीय संचेतना का पर्याय है। नाथपंथ में प्रमुखतया नवनाथ एवं चौरासी सिद्धों की मान्यता एवं व्याप्ति है। फिर भी इनके अतिरिक्त भी अनेक सिद्धों एवं योगियों का उल्लेख भी प्राप्त होता है। नाथ–परम्परा आज भी नैरन्तर्य पूर्ववत गतिमान है। ऐसी पंथिक–प्रसिद्धि है कि सृष्टि के आरम्भ में नवनाथ हुए और इन्होंने ही नाथपंथ का प्रवर्तन किया। सहज विषय–विंदु है कि ये नवनाथ कौन–कौन हैं, उनका आध्यात्मिक, ऐतिहासिक और अकादमिक अवदान क्या है। नवनाथ के विषय में डॉ. पीतांबरदत बड़थ्वाल से प्रारम्भ करके आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, रुद्रकाशिकेय, स्वामी विष्णुतीर्थ महाराज, विधुशेखर भट्टाचार्य, प्रबोध चन्द्र बागची, हर प्रसाद शास्त्री, कल्याणी मलिक, महा महोपाध्याय बबुआ मिश्र, महा महोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, क्षितिमोहन सेन, मोहन सिंह, जी. डब्ल्यू ब्रिग्स, जी. एस. घुर्ये, फर्कुहर, अक्षयकुमार बनर्जी, महा महोपाध्याय पं राहुल सांकृत्यायन, पं. परशुराम चतुर्वेदी, डॉ. शांतिप्रसाद चंदोला, डॉ. भगवती प्रसाद सिंह, आचार्य विनय मोहन शर्मा, डॉ. रांगेय राघव, डॉ. धर्मवीर भारती, डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय, डॉ. वेदप्रकाश जुनेजा, डॉ. दिवाकर पाण्डेय, डॉ. अनुज प्रताप सिंह, रामलाल श्रीवास्तव आदि विद्वानों ने अपने–अपने विचार–विमर्ष प्रस्तुत किए हैं। इन्ही सब विद्वानों के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करके नवनाथ के बारे में निष्कर्ष निकाला गया है तथा विद्वानों के लिए एवं ग्रन्थों के अध्ययन के आधार पर नवनाथ के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द– सिद्ध नवनाथ नाथपंथ, चरित्र, आध्यात्मिक, मानवीय, संचेतना।

नवनाथों की सूची के संदर्भ में नाथपंथी विद्वानों के मत अलग–अलग हैं। योगिसंप्रदायविष्कृति[1] में नवनारायणों को नवनाथों के रूप में अवतरित होने की कथा का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ के अनुसार कविनारायण ने मत्स्येद्रनाथ, करभाजन नारायण ने गहिनिनाथ, अन्तरिक्षनारायण ने ज्वालेन्द्रनाथ अर्थात् जालंधरनाथ, प्रबुद्धनारायण ने करणिपानाथ अर्थात् कानिपा, आविर्होत्रनारायण ने सम्भवतः नागनाथ, पिप्पलायन नारायण ने चर्पटनाथ, चमसनारायण ने रेवानाथ, हरिनारायण ने भर्तृनाथ अर्थात् भर्तृहरि, द्रुमिलनारायण ने गोपीचन्द्रनाथ नाम से अवतार लिया। ग्रन्थ में गोरक्षनाथ का अवतार किस नारायण ने लिया और आविर्होत्रनारायण ने किस नारायण का अवतार धारण किया इसका भी उल्लेख नहीं प्राप्त होता है । परन्तु

ग्रन्थ की भूमिका में जिन दस सिद्ध–आचार्यों का नामोल्लेख है, उनमें नागनाथ का नाम भी है ग्रन्थकार ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि भगवान् महादेव जी ने गोरक्षनाथ को नवनाथों के अवतरित होने के बाद उत्पन्न किया। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि नागनाथ को नवनाथों में माना गया है तथा गोरक्षनाथ को नवनाथों में शामिल नहीं माना गया है। इसीलिए आविर्होत्रनारायण से ही नागनाथ का अवतार हुआ माना जा सकता है।

एक अन्य ग्रन्थ सुधाकरचन्द्रिका[2] में भी गोरक्षनाथ को नवनाथों से अलग माना गया है। सुधाकरचन्द्रिका के अनुसार नवनाथों की सूची में – 1. एकनाथ, 2. आदिनाथ, 3. मत्स्येंद्रनाथ, 4. उदयनाथ, 5. दण्डनाथ, 6. सत्यनाथ, 7. संतोषनाथ, 8. कूर्मनाथ, तथा 9. जालंधरनाथ हैं। नेपाली–परम्परा में भी नवनाथों का नाम भिन्न है और गोरखनाथ जी का नाम नहीं है। इन नवनाथ–सूचियों में गोरखनाथ का नाम न आने का कारण स्पष्ट करते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी[3] लिखते हैं कि – गोरखपंथी लोगों का विश्वास है कि इन नवनाथों की उत्पत्ति श्री गोरखनाथ (जिन्हें श्रीनाथ भी कहते हैं) से हुई है। नवनाथ गोरखनाथ के ही नवविध अवतार हैं। गोरखपंथियों का सिद्धान्त है गोरख ही भिन्न–भिन्न समय में अवतार लेकर भिन्न– भिन्न नाथान्त नाम से अवतरित हुए हैं और गोरख ही अनादि अनन्त पुरुष है।

महापर्वतंत्र में नवनाथों द्वारा भिन्न–भिन्न दिशाओं में श्न्यास करने की विधि बताई गयी है। इस ग्रन्थ में नवनाथों का नाम निम्न प्रकार से प्रयुक्त किया गया है – 1. गोरक्षनाथ, 2. जालंधरनाथ, 3. नागार्जुन, 4. सहस्रार्जुन, 5. दत्तात्रेय, 6. देवदत्त, 7. जड़भरत, 8. आदिनाथ, 9. मत्स्येंद्रनाथ। गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह में भी एक स्वतंत्र सूची प्राप्त होती है। तदनुसार नवनाथों में 1. गोरखनाथ, 2. जालंधरनाथ, 3. नागार्जुन, 4. सहस्रार्जुन, 5. दत्तात्रेय, 6. देवदत्त, 7. जड़भरत, 8. आदिनाथ, 9. मत्स्येन्द्रनाथ हैं। तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य में डॉ. योगीवशकर ने एक सूची उद्धृत की है, जिसमें 1. मत्स्येन्द्रनाथ, 2. गोरक्ष, 3. जालंधर, 4. कानपा, 5. भर्तृहरि, 6. रेवण, 7. नागनाथ, 8. चर्पट, 9. गहिनी को नवनाथ बताया गया है। पंडित परशुराम चतुर्वेदी ने उपलब्ध 20 सूचियों का तुलनात्मक अध्ययन करके नवनाथों की परिष्कृत सूची तैयार करने का प्रयास किया है, जिनमें 1. मत्स्येन्द्रनाथ, 2. गोरक्षनाथ, 3. जालंधरनाथ, 4. चौरंगीनाथ, 5. कानिफानाथ, 6. कणेरीनाथ, 7. चर्पटीनाथ, 8. कंथड़िनाथ, और 9. गोपीचन्द हैं । "वर्णरत्नाकरकार ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने 1. मीननाथ, 2. गोरक्ष, 3. चौरंगी, 4. हालिया, 5. कण्ह, 6. जालंधर को अपनी सूची में शामिल किया है । सम्प्रति शिवयोगिसंप्रदाय भेष बारह पंथ में प्रसिद्ध नवनाथ क्रमशरू 1. आदिनाथ, 2. उदयनाथ, 3. सत्यनाथ, 4. संतोषनाथ, 5. अचलनाथ, 6. कन्थडिनाथ, 7. चौरङ्गिनाथ, 8. मत्स्येन्द्रनाथ 9. गोरखनाथ हैं।

गुजरात और महाराष्ट्र में नवनाथ कथा उसी प्रकार से व्यापक रूम में प्रचलित है जिस प्रकार से उत्तर भारत में सत्यनारायण व्रत कथा। मराठी नवनाथ कथा में नवनाथों की सूची निम्नवत् है–1. मत्स्येन्द्रनाथ, 2. जालंधरनाथ, 3. गोरक्षनाथ, 4. रेवणनाथ, 5. नागनाथ, 6. भर्तृहरिनाथ, 7. चर्पटनाथ, 8. कृष्णनाथ, 9. गहनिनाथ। स्कन्दपुराण केदारखंड में 1. आदिनाथ, 2. अनादिनाथ, 3. कूर्मनाथ, 4. भवनाथ, 5. सत्यनाथ, 6. संतोषनाथ, 7. मत्स्येन्द्रनाथ, 8. गोपीनाथ और 9. गोरक्षनाथ को नवनाथ की सूची में रखा गया है। गोदावरी नासिक के 12 पंथी पण्डा वेदमूर्ति हरिनाथ रघुनाथ गोधनी की ऐतिहासिक बही की नवनाथ सूची में क्रमशरू 1. आदिनाथ, 2. मत्स्येन्द्रनाथ, 3. उदयनाथ, 4. दंडितानाथ, 5. भारद्वाजनाथ, 6. सत्यनाथ, 7. संतोषनाथ, 8. भवनार्जिनाथ तथा 9. गोरक्षनाथ का नामोल्लेख किया गया है । भारद्वाज संहिता कदली मंजुनाथ माहात्म्य में नवनाथ की सूची में 1. आदिनाथ, 2.मीननाथ, 3.कंथडीनाथ, 4. गोरक्षनाथ, 5. कोङ्कणनाथ, 6.विरुपाक्षनाथ, 7. जालंधरनाथ, 8. चौरङ्गिनाथ, 9. अरुणाचलनाथ का नामोल्लेख है। डॉ. वेदप्रकाश जुनेजा ने नवनाथ और नाथयोगियों पर विचार करते हुए नवनाथ की सूची में क्रमशः 1. आदिनाथ, 2. मत्स्येन्द्रनाथ, 3. गोरखनाथ, 4. 5. जालंधरनाथ, 6. चौरंगीनाथ, 7. चरपटीनाथ, 8. भर्तृहरिनाथ, 9. गोपीचन्द और 10. कानिकानाथ को रखा है। गोरक्षनाथ और नाथसिद्ध के रचनाकार डॉ. अनुज प्रताप सिंह ने अनेक सूचियों का शोधपरक अध्ययन के पश्चात् नवनाथ की लगभग सर्वमान्य नामावली तैयार की है । इस सूची में 1. आदिनाथ, 2.

मत्स्येन्द्रनाथ, 3. गोरक्षनाथ, 4. जालंधरनाथ, 5. चर्पटीनाथ, 6. कानिफानाथ, 7. चौरंगीनाथ, 8. भर्तृहरिनाथ, 9. गोपीचन्दनाथ हैं।

उपर्युक्त उल्लिखित नवनाथ–सूचियों पर विमर्श करने से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि 1. आदिनाथ, 2. मत्स्येन्द्रनाथ, 3. गोरक्षनाथ, 4. चर्पटीनाथ, 6. काविकानाथ, 7. चौरंगीनाथ को लगभग सभी विद्वानों ने नवनाथ के रूप में स्वीकार किया है परन्तु हमारा मंतव्य है कि विचारनाथ, वैरागनाथ (जिन्हें क्रमशरू भर्तृहरि और गोपीचन्द नाम से भी जाना जाता है) तथा नागनाथ को भी नवनाथ के रूप में स्वीकृति हेतु विचार करने की आवश्यकता है। योगी संप्रदायाविष्कृति के ग्रन्थकार जार्ज वेस्टर्न ब्रिग्स, डॉ. अनुज प्रताप सिंह, स्वामी विष्णुतीर्थ महाराज आदि जैसे विद्वान् इन तीनों आचार्यों को भी नवनाथ के रूप में स्वीकार करते हैं। राजगुरु योगी वस्कर, तथा मराठी नवनाथ कथा में इन तीनों नामो में से केवल भर्तृहरि एवं नागनाथ को नवनाथ मानते हैं। डॉ. वेदप्रकाश जुनेजा भर्तृहरि और गोपीचन्द को नवनाथ में मानते है। वर्णरत्नाकर के ग्रन्थकार ने इन तीनों आचार्यों में से केवल भर्तृहरि को ही नवनाथ माना है। वहीं गोरखसिद्धान्त संग्रह में, स्कन्दपुराण केदारखण्ड में तथा पं परशुराम चतुर्वेदी जैसे अनेक विद्वान् गोपीचन्द को भी नवनाथ मानते हैं। निष्कर्षतः भर्तृहरि, नागनाथ और गोपीचन्द को सर्वाधिक विद्वान् नवनाथ के रूप में मान्यता प्रदान करते हैं।

वर्णित विचार–विदुओ के आलोक में यह निष्कर्ष निःसृत होता है कि नवनाथ की सूची में 1. आदिनाथ, 2. मत्स्येन्द्रनाथ, 3. गोरखनाथ, 4. जालंधरनाथ, 5. चर्पटीनाथ, 6. कानिफानाथ, 7. चौरंगीनाथ, 8. भर्तृहरि, 9. नागनाथ और 10. गोपीचन्द को सर्वसम्मति से शामिल किया जा सकता है । चूँकि उपर्युक्त यह संख्या दस है इसलिए इन सिद्धयोगीयों में से कोई एक सिद्ध अवश्य ऐसा होगा जो की नवनाथ की सर्वमान्य सूची में सम्मिलित नहीं किया जा सकेगा। इस संभावना के तीन कारण प्रतीत हो रहें हैं– प्रथम, आदिनाथ के बारे में विद्वानों का मत है कि ये नवनाथों की उत्पत्ति करने वाले हैं इसलिए इनको नवनाथ की सूची में न रखा जाय, द्वितीय, गोरखपंथी विद्वानों का मानना है कि नवनाथों की उत्पत्ति श्री गोरखनाथ (जिन्हें श्रीनाथ भी कहा जाता है) से हुई है, नवनाथ गोरखनाथ के ही नवविध अवतार हैं, गोरखनाथ ही विभिन्न नामों से अवतरित हुये हैं, इसलिए गोरखनाथ नवनाथों की सूची में न रखा जाय, तृतीय हमारे अन्वेषण में कोई त्रुटि शेष रह गयी हो या हमारी अज्ञानता। प्रथम तथ्य के कारण प्रदत्त नवनाथों की दस–आचार्यों की सूची में से आदिनाथ नवनाथ नहीं होंगे, द्वितीय तथ्य के कारण श्रीगोरखनाथ नवनाथ नहीं होंगे। इन तथ्यों के अतिरिक्त कोई अन्य कारण, यदि होगा तो, यह हमारी अल्पज्ञता का द्योतक है, और यह कारण विद्वानों हेतु गहन तथ्यात्मक विश्लेषण का विचार–विन्दु प्रस्तुत करता है ।

उपरोक्त नवनाथों की विभिन्न सूचियों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत नवनाथो में 1. आदिनाथ, 2. मत्स्येन्द्रनाथ, 3. गोरखनाथ, 4. जालंधरनाथ, 5. चर्पटीनाथ, 6. कानिफानाथ, 7. चौरंगीनाथ, 8. भर्तृहरिनाथ, 9. नागनाथ, तथा, 10. गोपीचन्द्रनाथ पर जनश्रुति की आस्था, उनकी रचनाओं की अकादमिक–महत्ता, उनके ऐतिहासिक आविर्भाव–काल तथा उनके उपदेशों की नैरंतर्यता के आधार पर नवनाथों का भारतीय धार्मिक लोकमन पर आपतित प्रभाव को जानने–समझाने का सूक्ष्म–प्रयास कर रहा हूँ, जो निम्नलिखित है।

महायोगी आदिनाथ– आदिनाथ स्वयं भगवान शिव ही हैं। महायोगी गुरु श्रीगोरक्षनाथ द्वारा विरचित सिद्धसिद्धान्तपद्धति में इसकी पुष्टि करते हुए लिखा गया है कि –

देदीप्यमानस्तत्त्वस्य कर्ता साक्षात् स्वयं शिवः।

संरक्षन्तो विश्वमेव धीरारू सिद्धमताश्रयाः।।

नाथ सम्प्रदाय के प्रथम श्रीनाथ शिव ही हैं। हठयोग प्रदीपिका टीका में ब्रह्मानन्द जी ने लिखा है कि –

आदिनाथः सर्वेषां नाथानां प्रथमः,

ततो नाथसंप्रदायः प्रवृत्त इति नाथसंप्रदायिनो वदन्ति। (1/5)

अर्थात् आदिनाथ सभी नाथों में प्रथम हैं तथा उन्होंने नाथ सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया है ऐसा नाथ सम्प्रदाय वालों का विश्वास है।

भगवान् शिव योगदर्शन के प्राणस्रोत माने जाते हैं। योग–ज्ञान सम्यकतः इन्हीं के द्वारा दिया गया है। वस्तुतः योग ज्ञान ही नहीं अपितु इस धरा पर सम्पूर्ण ज्ञान इन्हीं की देन है। सम्पूर्ण शब्द शिव के डमरू से ही चौदह माहेश्वर सूत्र के रूप में निरूसृत हैं। नवनाथ विषयक सभी मतों में निर्विवाद रूप से स्वीकृत है कि भगवान शिव ही आदिनाथ के रूप में नाथदर्शन, नाथमत, नाथधारा एवं नाथ–सम्प्रदाय का उपदेश दिये हैं। महायोगी गुरु श्रीगोरक्षनाथ ने भी अपनी रचना 'गोरखपद्धति' (–2/100)में यह मत व्यक्त किया है कि योगशास्त्र आदिनाथ के मुखकमल से प्रसूत है –

योगशास्त्रं पठेन्नित्यं किमन्येः शास्त्रविस्तरैः।

यत्स्वयं आदिनाथस्य निर्गतं वदनाम्बुजात्।। (गो.प. 2/100)

आदिनाथ भगवान् शिव के द्वारा नाथ दर्शन का उपदेश शिव–पार्वती के संवाद के रूप में महायोगी गुरु श्रीगोरक्षनाथ द्वारा रचित योगबीज (7–8) नामक ग्रन्थ में प्राप्त होता है। भगवती पार्वती ने श्रीशंकर से पूछा कि सभी जीव सुख–दुख रूप मायाजाल से वेष्टित हैं, उनकी मुक्ति किस प्रकार से होगी। हे महादेव! मोक्ष को प्राप्त करने वाले योगमार्ग का वर्णन कीजिये। इस पर भगवान् शिव ने कहा –

बद्धायेन विमुच्यन्ते नाथमार्गमतः परम्।

नानामार्गेस्तु दुष्प्राप्तं कैवल्यं परमं पदम् ।

सिद्धमार्गेण लभ्येत नान्यथा शिवभाषितम्।। (योगवीज 7/8)

अर्थात् शंकर ने कहा कि हे पार्वती! मैं नाथमार्ग, सिद्धामृतमार्ग का वर्णन करता हूँ, इसका आश्रय ग्रहण करने पर सभी जीव जो संसार–बन्धन से ग्रस्त हैं, मुक्त हो जाते हैं। यह सर्व सिद्धिकर मार्ग है।

नारदपुराण के उत्तरार्द्ध में वर्णन प्राप्त होता है कि शिव जी ने पार्वती को नाथ तत्त्वोपदेश दिया –

तत्त्वोपदेशाय जगाम भद्रे स लोकलोकाचलमप्रमेय।

नारदपुराण के अनुसार आदिनाथ भगवान शिव ने मणिप्रदीप्त सप्तशृंग पर भगवती पार्वती को मोक्ष प्राप्ति के तत्त्व का उपदेश प्रदान करना प्रारम्भ किया। भगवती पार्वती को निद्रा आ गई। भगवती पार्वती के निद्राभूत निद्रानिमगन हो जाने पर मत्स्य के उदर में पोषित हो रहे बालक ने यह योगतत्त्वोपदेश सुना। भगवान् शंकर ने योग–दृष्टि से ज्ञात कर लिया कि योग दर्शन कौन ग्रहण कर रहा है। तदोपरान्त बालक ने सामने आकर उन्हें प्रणाम किया और सम्पूर्ण वृत्तान्त का वर्णन किया। भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर बालक को अपनी गोद में बैठाकर उनका मुख चूमा और बालक को अपना पुत्र मत्स्येन्द्रनाथ कहा।[4]

इस प्रकार नाथ परम्परा का ज्ञान आदिनाथ से प्रसूत होकर मत्स्येन्द्रनाथ को तथा मत्स्येन्द्रनाथ से गोरखनाथ ने प्राप्त किया। संत ज्ञानेश्वर ने भी नाथ दर्शन के प्रवर्तक आदिनाथ को ही माना है। अपने ज्ञानेश्वरी नामक गीतकाव्य में उन्होंने लिखा है कि – क्षीरसागर के तट पर श्रीशंकर ने एक बार शिक्त (पार्वती) के कान में जो उपदेश दिया था, वह क्षीरसागर की लहरों में स्थित मछली के पेट में स्थित बालक के हाथ लगा। यह उपदेश मत्स्येन्द्रनाथ ने सप्तशृंग पर्वत पर चौरंगीनाथ को दिया तथा मत्स्येन्द्रनाथ ने ही इसे गोरखनाथ को दिया। इस प्रकार से सन्त ज्ञानेश्वर भी नाथ–मत के आदि प्रवर्तक भगवान् शिव को ही मानते हैं।[5]

महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ– ऐसी पंथिक मान्यता है कि मछली के पेट में रहकर भगवान शिव के द्वारा माँ पार्वती को प्रदत्त उपदेश के कारण इन्हें मत्स्येन्द्रनाथ कहा गया। इन्हीं को मीननाथ भी कहा जाता है।

आदिनाथ स्वयं भगवान शिव हैं, इसलिए मनुष्य रूपी नाथ गुरुओं में मत्स्येन्द्रनाथ ही नाथपंथ के प्रथम आचार्य हैं। सम्पूर्ण भारतवर्ष में इनके नाम की असंख्य दन्त कथायें प्रचलित हैं और लगभग सभी दन्तकथाओं में इनका वर्णन अपने योग्यतम शिष्य गोरखनाथ के साथ ही कथित है। दन्तकथाओं में ऐतिहासिक–तथ्य कितना है, इसको स्थापित करने के लिए शोध की आवश्यकता है। अनेक मूलस्रोतों से जो ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त होता है उनसे इन दन्तकथाओं की प्रामाणिकता का तथ्य भी मिल जाता है। मत्स्येन्द्रनाथ पर शोध हेतु दन्तकथाओं के अतिरिक्त कुछ पुस्तके भी हैं जिनसे हमें सहायता मिल सकती है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने नाथ–सम्प्रदाय में लिखा है कि मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा रचित कई पुस्तकें नेपाल की दरबार लाइब्रेरी में सुरक्षित हैं। उनमें एक का नाम है ृकौल ज्ञान निर्णयश, इसकी लिपि को देखकर स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं. हरिप्रसाद शास्त्री ने अनुमान किया था कि वह ईसवीं सन् की नवीं शताब्दी का लिखा हुआ है।[6] हाल ही में कलकत्ता विश्वविद्यालय के (अब विश्वभारती शान्तिनिकेतन के) अध्यापक डॉ. प्रबोधचन्द्र बागची ने उस पुस्तक का तथा मत्स्येन्द्रनाथ की लिखी अन्य चार पुस्तकों का बहुत सुन्दर संपादित संस्करण प्रकाशित कराया है। बाकी चार पुस्तकें के नाम हैं – अकुलवीरतन्त्र – ए, अकुलवीरतन्त्र– बी, कुलानन्द और ज्ञानकारिका। डॉ. बागची के अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि इन ग्रन्थों की हस्तलिपि ईसवी सन् की ग्यारहवीं शताब्दी के मध्यभाग की है, नवीं शताब्दी की नहीं।[7] अनेक प्राचीन ग्रन्थों में इनको मच्छघ्नपाद, मच्छेन्द्रपाद, मत्स्येन्द्रपाद, मीनापाद, मच्छिन्द्रनाथपाद तथा मत्स्येन्द्र नामों से सम्बोधित किया गया है। मच्छघ्न नाम के आधार पर हरिप्रसाद शास्त्री ने अनुमान लगाया है कि मत्स्येन्द्रनाथ मछली मारने वाली कैवर्त जाति में उत्पन्न हुये थे। कौलज्ञान निर्णय के अनुसार मत्स्येन्द्रनाथ ब्राह्मण कुल में पैदा हुये थे, परन्तु एक विशेष कारण से उनका नाम मत्स्यघ्न पड़ गया। इस पुस्तक के अनुसार कार्तिकेय ने कुलागम शास्त्र को चुरा कर समुद्र में फेंक दिया था तब उस शास्त्र का उद्धार करने के लिए स्वयं भैरव अर्थात् शिव ने मत्स्येन्द्रनाथ का अवतार धारण करके समुद्र में घुसकर उस शास्त्र का भक्षण करने वाले मत्स्य का उदर विदीर्ण करके शास्त्र का उद्धार किया। इसी कारण से वे मत्स्यघ्न कहलाये। मीननाथ तथा मत्स्येन्द्रनाथ भी एक ही हैं।(तिब्बती परंपरा के अनुसार मीननाथ मछंदरनाथ के पिता थे। नेपाल में प्रचलित विश्वास के अनुसार वे मत्स्येंद्रनाथ के छोटे भाई हैं।) कौलज्ञान निर्णय के अनुसार मीननाथ मत्स्येन्द्रनाथ से अभिन्न हैं। वर्णरत्नाकर से भी यह सिद्ध होता है क्योंकि इसमें दिये गये नाथ सिद्धों की सूची काफी पुरानी है, जिसमें प्रथम सिद्ध का नाम मीननाथ है और 41वें सिद्ध का नाम मीन है। प्रथम सिद्ध मीननाथ निश्चय ही मत्स्येन्द्रनाथ हैं तथा 41वें सिद्ध अन्य हैं, जो कि इनकी नाथ परम्परा में अवतरति के कारण इनके पुत्र कह दिये गये। मत्स्येन्द्रनाथ और मीननाथ का एक होने का प्रमाण जयद्रथ की तन्त्रालोक की टीका में भी प्राप्त होता है –

भैरव्या भैरवात् प्राप्तं योगं व्याप्त ततरू प्रिये।

तत्सकाशात्तु सिद्धेन मीनादयेन बरानने।

कामरूपे महापीठे मच्छन्देन महात्मना।।[8]

अतएव निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मीननाथ तथा मत्स्येन्द्रनाथ एक ही हैं।

महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ के जीवन चरित्र पर प्रकाश डालने के लिए उनके सम्बन्ध में प्रचलित जनश्रुतियों, किंवदन्तियों, तन्त्रग्रन्थों तथा नाथ साहित्यों का शोध एवं अध्ययन आवश्यक है। नित्याह्निक तिलकम् पुस्तक में उल्लेख है कि ृमत्स्येन्द्रनाथ का पूर्वनाम विष्णु शर्मा था, वे ब्राह्मण हैं और वारणा उनकी जन्मभूमि है। मत्स्येन्द्रनाथ के चरित्र–चित्रण का एक विशिष्ट अंग उनके द्वारा कुलागम शास्त्र का उद्धार है। उक्त विषयक अनेक उपाख्यान मिलते हैं जिसकी कथा निम्नवत है –

कौल ज्ञान निर्णय के अनुसार भैरव और भैरवी चन्द्रदीप में गए हुए थे। वहाँ कार्तिकेय उनके शिष्य रूप में पहुँचे। अज्ञान के आधिक्य से उन्होंने महान् कुलागम शास्त्र को समुद्र में फेंक दिया। भैरव (मत्स्येन्द्रनाथ) ने समुद्र में जाकर मछली का पेट फाड़ कर उस शास्त्र का उद्धार किया। इस कार्य से कार्तिकेय बहुत क्रुद्ध

हुए। उन्होंने एक बड़ा सा गड्ढा खोदा और छिपकर दुबारा उस शास्त्र को समुद्र में फेंक दिया। इस बार एक प्रचण्डतर शक्तिशाली मत्स्य ने उसे खा लिया। भैरव ने शक्ति–तेज से एक जाल बनाया और उस मत्स्य को पकड़ना चाहा पर वह उतना ही शक्ति सम्पन्न था, जितना स्वयं भैरव थे। हार कर भैरव को ब्राह्मण वेश त्याग करना पड़ा। उस महामत्स्य का उदर फिर से विदीर्ण करके उन्होंने कुलगम शास्त्र का उद्धार किया।[9]

मत्स्येन्द्रनाथ की जीवनी के सम्बन्ध में एक अन्य कथा सुकुमार सेन द्वारा लिखित बंगला साहित्य के इतिहास में प्राप्त होती है, जो फयजुल्ला का गोरखविजय और श्यामदास के मीनचेतन पर आधारित है। कथा इस प्रकार है – आद्य और आद्या ने पहले देवताओं की सृष्टि की बाद में चार सिद्धों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद एक कन्या भी उत्पन्न हुई, इसका नाम गौरी रखा गया। आद्य के आदेश से शिव गौरी से विवाह करके पृथ्वी पर आ गये। चारो सिद्ध जिनका नाम मीननाथ, गोरखनाथ, जालंधरनाथ (हाडिया) और कानुपा कृष्णपाद (कानफा) थे, वायुमात्र के आहार से, योगाभ्यास आरंभ किया। गोरखनाथ मीननाथ के सेवक हुए और कानपा (कानफा), हाडिया (हाडिफा) के। एक दिन गौरी ने शिव के गले में मुण्डमाल देखकर उसका कारण पूछा। तब शिव ने बताया कि वस्तुतः ये मुण्ड गौरी के ही हैं। गौरी हैरान होकर सोचने लगी कि क्या कारण है कि वे बराबर मरती रहती हैं और शिव कभी नहीं मरते। पूछने पर शिव ने बताया कि यह गुप्त रहस्य सबके सुनने योग्य नहीं है। चलो हम लोग क्षीरसागर में टंग (डोंगी) पर बैठकर इस ज्ञान के विषय में वार्तालाप करें। दोनों क्षीरसागर में पहुँचे, इधर श्री मीननाथ मछली बन कर टंग के नीचे बैठ गए। देवी गौरी को सुनते–सुनते जब नींद आ गई तब भी मीननाथ हुँकारी भरते रहे। इस आवाज से जब देवी की निद्रा टूटी तो वे कह उठीं कि मैंने तो महाज्ञान सुना ही नहीं। शिव सोचने लगे कि यह हुँकारी किसने भरी। देखते हैं तो टंग के नीचे मीननाथ हैं। उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि तुम एक समय महाज्ञान भूल जाओगे।[10] अग्रिम कथा का सारांश है कि गौरी ने बार–बार शिव से आग्रह किया कि वे चारों सिद्धों का विवाह करके वंश चलाने का आदेश दे दें। शिव ने कहा कि सिद्ध लोगों में काम विकार नहीं है। गौरी ने कहा कि मनुष्य के शरीर में तो काम विकार होगा ही और शिव से कहा कि आप आज्ञा दें तो मैं परीक्षा ले लेती हूँ। शिव ने आज्ञा दे दी। शिव चारों सिद्धों को बुलाये और गौरी ने भुवनमोहिनी रूप बनाकर सिद्धों को अन्न परोसा। चारों ही सिद्ध उस रूप पर मुग्ध हो गये। मीननाथ ने मन ही मन सोचा कि यदि ऐसी सुन्दरी मिले तो आनन्द केलि से रात काटूँ। देवी ने उनको शाप दिया कि तुम महाज्ञान भूलकर कदली देश में सोलह सौं सुन्दरियों के साथ कामकौतुक में रत होओगे। मीननाथ कदली देश में महाज्ञान भूलकर स्त्रियों के साथ विहार करने लगे। कानपा के द्वारा सूचना पाकर इनके शिष्य गुरु गोरखनाथ ृलंग और महालंग नामक दो शिष्यों के साथ नर्तकी का वेश बनाकर अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ की शक्तियों को याद दिलाकर उद्धार किया।

महायोगी गोरखनाथ – दीक्षा प्राप्त करने के उपरान्त का जीवन नया जन्म माना जाता है इसलिए साधुओं, संन्यासियों, योगियों के दीक्षा के पूर्व का वृत्तान्त प्राप्त करना दुरूह कार्य है। ऐसे जीवन के वृत्तांत का अनुमान मात्र किया जा सकता है। महायोगी गुरु गोरखनाथ के समय का अनुमान बहुश्रुत लोककथाओं एवं साहित्यों के आधार पर लगाया जा सकता है। नाथ योगियों का मत है कि उनका सम्प्रदाय सृष्टि पूर्व था। सृष्टि के प्रारम्भ में भगवान् विष्णु जब कमल से प्रकट हुए तब वे पाताल में जाकर गुरु गोरखनाथ से सृष्टि करने में सहायता की याचना की। गोरखनाथ ने दया करके अपनी धूनी से एक मुट्ठी विभूति दी और कहा कि यदि तुम इसे जल के ऊपर छिड़क दोगे तो तुम सृष्टि करने में समर्थ होओगे। विष्णु ने वैसा ही किया।[11]

विलियम क्रुक ने ट्राइब्स ऐण्ड कास्ट्स ऑफ दि नार्थ वेस्टर्न प्राविंसेज ऐण्ड अवध[12] तथा ग्रियर्सन ने इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रेलिजन एण्ड एथिक्स[13] में लिखा है कि गोरखनाथ सत्ययुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेता में गोरखपुर में, द्वापर में द्वारिका के आगे हुरमुख में और कलिकाल में काठियावाड़ की गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे। ब्रिग्स ने गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज में लिखा है कि गोरखपुर के तत्कालीन

पीठाधीवर ने बताया था कि गुरु गोरखनाथ टिला (झेलम–पंजाब) से गोरखपुर आए थे। नासिक के नाथ योगियों का मानना है कि वे सर्वप्रथम नेपाल से पंजाब आए और बाद में नासिक की ओर गये थे। इन उद्धरणों को ध्यान में रखकर ब्रिग्स ने गुरु गोरखनाथ को पंजाब का निवासी बताया।[14] नेपाल राजा की लाइब्रेरी से प्राप्त गोरखसहस्रनाम स्तोत्र में एक श्लोक इस प्रकार है –

अस्ति याभ्यां (पश्चिमायां) दिशिकश्चिद्देशः बहव संज्ञकः।

तत्राजाने महाबुद्धिर्ममहामन्त्र प्रसादतः।।

अर्थात् पश्चिम दिशा में कोई बड़व नामक देश है, बहीं महामन्त्र के प्रसाद से महाबुद्धिशाली गोरखनाथ का प्रादुर्भाव हुआ। योगी संप्रदाय विष्कृति में उन्हें गोदावरी तट के किसी चन्द्रगिरि में उत्पन्न बताया गया है।[15]

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने माना है कि गोरखनाथ निश्चित रूप से ब्राह्मण जाति में उत्पन्न हुए और ब्राह्मण वातावरण में बड़े हुए। उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ भी शायद ही कभी बौद्ध साधक रहे हों। मेरे अनुमान का कारण गोरखनाथ साधना का मूल सुर है।[16] इस तथ्य की पुष्टि ब्रिग्स गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज।[17] तथा बालकर एडवर्ड का दि इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डिया एण्ड ऑफ ईस्टर्न सदर्न एशिया (पृ.1335) में दिये गये उद्धरण से भी हो जाती है। इनके अनुसार गोरखनाथ जी जायस नामक एक नगर में ब्राह्मणकुल में पैदा हुये थे। मलिक मुहम्मद जायसी ने स्वरचित काव्य ग्रन्थ पद्मावत में स्वीकार किया है कि जायस नगर धर्मस्थान था।

प्रचलित एक लोक–कथानक इस प्रकार है – अयोध्या के निकट सरयू के तट से थोड़ी दूर पर जयश्री अथवा जायस नामक स्थान में अलख जगाते समय एवं भिक्षाटन करते हुए मत्स्येन्द्रनाथ की दृष्टि एक निरूस्सन्तान ब्राह्मणी पर पड़ी। उन्होंने अपनी झोली से विभूति दी और आशीर्वाद दिया कि तुम पुत्रवती होगी। लोकलज्जा के भय से ब्राह्मणी ने विभूति सूखे गोबर के ढेर में (घूर में) छोड़ दिया। ठीक बारह वर्ष के बाद मत्स्येन्द्रनाथ जायस आये। ब्राह्मणी ने उनके पूछने पर सही बात कह दी। वे गोबर के ढेर के पास गये, अभिमन्त्रित विभूति को गोबर पर डाले और पूछे बेटा तुम कहाँ हो? गोबर के ढेर से आवाज आई, गुरु जी मैं यहाँ हूँ। गोबर को ऊपर से हटाकर बच्चे को बाहर निकाला गया। मत्स्येन्द्रनाथ ने कहा कि बच्चा गोबर से निकला है, इसलिए इसका नाम गोरखनाथ रहेगा। वे गोरखनाथ को साथ ले गये तथा योग दीक्षा प्रदान की। यह कथानक इतना प्रसिद्ध हुआ कि इसी को आधार बनाकर योगी– सम्प्रदायविष्कृति में भी यह प्रयुक्त किया गया। महाराष्ट्र की परम्परा में भी यही कथानक है परन्तु स्थान गोदावरी तट का चन्द्रगिरि नामक गाँव हैं। इन कथानकों में स्थान अलग–अलग हैं, परन्तु कथानक एक सा है। स्पष्टतरू गोरखनाथ ब्राह्मण कुल में ही अवतरित हुए। राहुल सांकृत्यायन ने गोरखनाथ का मूल स्थान प्रश्नवाचक चिन्ह के साथ गोरखपुर माना है। गोरखबोध नामक रचना से स्पष्ट होता है कि गोरखनाथ को मत्स्येन्द्रनाथ चन्द्रगिरि गाँव से अपने साथ लेकर तीर्थाटन के लिए निकल पड़े। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने नेपाल से संबंधित तथ्यों की भी चर्चा है। वे योगीसंप्रदायविष्कृति ग्रन्थ के आधार पर कहते हैं कि नेपाल में एक मत्स्येन्द्री जाति थी जिस पर तत्कालीन राजा और राजपुरुष लोग अत्याचार कर रहे थे। यह जाति गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ की पूजा करती थी। इसी के उद्धार के लिए गोरखनाथ ने नेपाल में 3 वर्ष तक अकाल पैदा किया था। उन्हीं के सहयोग से नेपाल में गोरखा राज्य स्थापित हुआ। यहीं पर गोरखनाथ ने पुतलों के शरीर में जान डलकर सैनिक बना दिया था। डॉ. एम. एल. कृष्णमूर्ति ने अपनी खोजों के आधार पर नागरी प्रचारणी सभा की पत्रिका में लिखा कि – खोज से स्पष्ट होता है कि कर्नाटक नाथ संप्रदाय के उन्नायक गोरखनाथ की भी जन्मभूमि एवं विहार भूमि थी।

इस प्रकार गोरखनाथ का व्यित्तत्व इतना विशाल था कि वे जहाँ भी गये वहाँ के लोगों ने अपने क्षेत्र को उनकी जन्मभूमि के रूप में प्रस्तुत किया। वे जहाँ भी पैदा हुये हों परन्तु पूरे भारत ही नहीं अपितु सभी

हिन्दू राष्ट्र के लिए वे भगवान शंकर के अवतार के समान हैं। उनके जन्मस्थान के निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए अभी शोध की आवश्यकता है। जन्म स्थान की भाँति जन्मकाल भी अभी तक निश्चित नहीं हो पाया है। गोरखनाथ के भक्त उन्हें शिवावतार मानते हैं हठयोगप्रदीपिका, वर्ण रत्नाकर कौलावली तंत्र, महार्णवतन्त्र, श्यामारहस्य, सुधाकर चन्द्रिका, गोरखपुराण, साधन शिखर, सारस्वत कुण्डलिनी महायोग सहित अनेक ग्रन्थों में श्रीगुरु गोरखनाथ को शिव का अवतार माना गया है। हमारे गुरु–तुल्य आर. एन. बनर्जी को लखनऊ में गुरु गोरखनाथ का दर्शन कुछ वर्ष पूर्व हुआ है। उनका कहना है कि कुंडलिनी जागरण के पश्चात् एक अजीव सा नशा चढ़ा रहता था। सन् 1977 ई. में एक दिन रास्ते में रात्रि हो गई, साइकिल से घर जा रहे थे, तभी नरही स्थित वन विभाग के आवास में एक शिव जी जैसी विशाल प्रतिमा दिखाई दी। मैं उन्हें शिव जी समझ कर प्रणाम किया, उस समय तक मैं गोरखनाथ के बारे में नहीं जानता था। परन्तु डॉ.जितेन्द्र चन्द्र भारतीय (शास्त्री) जी द्वारा लिखित सारस्वत कुण्डलिनी योग की पुस्तक प्राप्त हुई। पुस्तक के आवरण में छपी प्रतिमा के बारे में पूछा तब पता चला कि ये गुरु गोरखनाथ की प्रतिमा है तब मुझे पता चला कि मैंने उस दिन गुरु गोरखनाथ का दर्शन किया था। तब से उनकी साधना में रत रहने लगा।

सिद्धयोगी जालन्धरनाथ– सिद्धयोगी जालन्धरनाथ को जालन्धरपाद, जालन्धरनाथ, हाड़ीपा, हाड़ीपाद, हल्लीपाद आदि अनेक नामों से जाना जाता है। पारम्परिक अध्ययन से पता चलता है कि मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, जालन्धरनाथ तथा कृष्णपाद या कानिफा समकालीन हैं। जालंधरनाथ मत्स्येन्द्रनाथ के गुरु भाई थे। जालन्धरनाथ तिब्बती परम्परा में मत्स्येन्द्रनाथ के गुरु भी माने जाते हैं। तिब्बती परम्परा के अनुसार नगरभोग देश में ब्राह्मण कुल में इनका जन्म हुआ था। बाद में ये एक उत्कृष्ट पंडित भिक्षु बने किन्तु घंटापाद के शिष्य कूर्मपाद की संगति में आकर ये उनके शिष्य हो गए। मत्स्येन्द्रनाथ कण्हपा और तंतिया इनके शिष्यों में थे। भोटिया ग्रन्थों में इन्हें आदिनाथ भी कहा जाता है।[18] तनजूर (तन्जैन) में जालन्धरनाथ के लिखे हुए सात ग्रन्थों का उल्लेख हैं, जिनमें, राहुल जी के मतानुसार दो मगही भाषा में लिखे गये हैं। इन दोनों ग्रंथों के नाम हैं – 1. विमुक्त मंजरी गीत और 2. हूँकार चित्त विंदुभावना क्रम।[19] लोक में एक अन्य अनुश्रुति प्रसिद्ध है कि ये पंजाब में अधिष्ठित जालन्धरपीठ नामक तांत्रिक स्थान में उत्पन्न हुये थे।[20] एक अन्य परम्परा के अनुसार वे हस्तिनापुर के पुरुवंशी राजा वृहद्रथ के यज्ञाग्नि से उत्पन्न हुए थे, और इसीलिये इनका नाम ज्वालेन्द्रनाथ पड़ा। इस प्रकार जालन्धरनाथ की जन्मभूमि तीन स्थानों पर बतायी जाती है – 1. नगरभोग, 2. हस्तिनापुर, 3. जालंधरपीठ। इनकी जाति के बारे में भी तीन मत प्राप्त होते हैं– 1. तिब्बती परम्परा के अनुसार ब्राह्मण थे।, 2. बंगाली परम्परा में हाड़ी या हलखोर माने गये हैं।, 3. योगिसंप्रादायाविष्कृति के अनुसार वे युधिष्ठिर की 23 वीं पीढ़ी में उत्पन्न पुरुवंशीय राजा वृहद्रथ के पुत्र होने के कारण क्षत्रिय थे।[21]

जालंधर नाथ ने एक सिद्धान्त वाक्य नामक संस्कृत ग्रन्थ भी लिखा था, यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है पर एक श्लोक से पता चलता है कि जालन्धरनाथ नाथपंथ के अनुयायी थे, जालंधर के सिद्धान्त वाक्य में उनकी स्तुति इस प्रकार है –

वन्दे तन्नाथतेजो भुवनतिमिरहं भानुतेजस्करं वा
सत्कर्तृ व्यापकं त्वा पवनगतिकरं व्योमवन्निर्भरं वा
मुद्रानादत्रिशूलैर्विमलरुचिधरं खर्परं भस्ममिश्रं
द्वैतवाऽद्वैतरूपं द्वयत इत परं योगिनं शङ्करं वा।

स्कन्धपुराण के काशीखण्ड में नवनाथों के विन्यास के सिलसिले में जालंधरनाथ का नाम पाया जाता है –

ृजालंधरो वसेन्नित्यमुत्तरापथमाश्रितः।

गोरखनाथ ऐण्ड दि कनफटा योगी में ब्रिग्स ने लिखा है कि – जालंधरिया नामक जो संप्रदाय इस समय जीवित है वह जालंधरपाद का चलाया हुआ है। पहले इसे ृपाश पंथ कहते थे और नाथ मार्ग से ये लोग स्वतन्त्र और भिन्न थे। जालंधर या जालंधर नाथ को मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ से अलग करने के लिए ऐसा समझा गया क्योंकि जालंधरनाथ औघड़ थे जबकि मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ कनफटा।[22] कान चीर कर मुद्रा धारण करने पर योगी लोग कनफटा कहलाते हैं, परन्तु उसके पूर्व औघड़ कहे जाते हैं, परन्तु सिद्धान्त वाक्य में जालंधरपाद के उद्धृत श्लोक से पता चलता है कि मुद्रा नाद और त्रिशूल धारण करने वाले नाथ ही इनके उपास्य हैं। आज कल जालंधरिया सम्प्रदाय के लोग गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित पाण्डनाथी शाखा के ही हैं, परन्तु कानिपा सम्प्रदाय वाले, जिन्हें कुछ लोग जालन्धरिया से अभिन्न भी मानते हैं और जो लोग अपने को गोपीचन्द का अनुवर्ती मानते हैं, बारह पंथियों से अलग समझे जाते हैं।[23] सपेला या संपेरे इसी सम्प्रदाय के माने जाते हैं। इन बातों से यह अनुमान होता है कि कापालिक मार्ग का स्वतन्त्र अस्तित्व था जो बाद में गोरखपंथी साधुओं में अन्तर्निहित हो गया। गोरखनाथी साधुओं को कान में कुंडल (मुद्रा) डालना आवश्यक है। यह गोरखनाथी योगियों का चिह्न है तथा इसका गोरखपंथ में अनेक आध्यात्मिक उपयोग है। सिद्ध–सिद्धान्त पद्धति में मुद्रा धारण का अनेक वर्णन है –

मुद् मोदे तु रादाने जीवात्मपरमात्मनोः।

उभयोरैक्यसंभूतिर्मुद्रेति परिकीर्तिता।।

मोदन्ते देवसंधाश्च द्रवन्तेऽसुरराशयः।

मुद्रेति कथिता साक्षात् सदाभद्रार्थदायिनी।।

अर्थात् शब्द मुद् (प्रसन्न होना) और रा (आदान, ग्रहण) इन अधातुओं से बना है। ये दोनों जीवात्मा और परमात्मा के प्रतीक हैं, चूँकि इससे देवता लोग प्रसन्न होते हैं और आसुर लोग भाग खड़े होते हैं, इसलिए इसे साक्षात्कल्याणदायिनी मुद्रा माना जाता है। मुद्रा धारण के लिए कान का फाड़ना आवश्यक है और यह कार्य छूरी या छुरिका से ही होता है। इसीलिए क्षुरिकोपनिषद् में छूरी का माहात्म्य वर्णित करते हुए कहा गया है –

क्षुरिकां संप्रवक्ष्यामि धारणं योगसिद्धये।

संप्राप्य न पुनर्जन्म योगयुक्तः प्रजायते।।

अर्थात् जो साधू कान फाड़कर मुद्रा धारण नहीं करते, उनका गोरखनाथ के मार्ग से संबंध संदेहास्पद ही है। इस आलोचना से स्पष्ट है कि जालंधरनाथ और कृष्णपाद द्वारा प्रवर्तित मत नाथ संप्रदाय के अन्तर्गत तो था, परन्तु वे मत्स्येन्द्रनाथ – गोरखनाथ से भिन्न थे। बाद में चलकर वह गोरखनाथी शाखा में अन्तर्भुक्त हो गया।[24]

जालन्धरनाथ का जीवन चरित्र इतना दुरुह है कि उनके जन्म स्थान, ,सिद्धि प्राप्त स्थान का निर्णय करना कठिन हो जाता है। जालन्धर नाथ के जीवन चरित्र सम्बन्धी कुछ वृत्तान्त निम्नवत् हैं –

जालन्धरनाथ की एक कथा श्यामदास रचित मीनचेतन और फैजुल्ला रचित बंगला काव्य गोरखविजय में पाया जाता है। दोनों ग्रन्थों की कथावस्तु लगभग एक जैसा ही है। कथा है कि – आद्य और आद्या ने पहले देवताओं की सृष्टि की। उसके बाद चार सिद्धों की उत्पत्ति हुई। बाद में एक कन्या भी उत्पन्न हुई, नाम रखा गया गौरी। आद्य के आदेश से शिव ने गौरी से विवाह किया और पृथ्वी पर चले आए। चारो सिद्धों ने, जिनका नाम मीननाथ, गोरखनाथ, हाडिफा (जालंधरनाथ) और कानफा (कानूपा, कृष्णपाद) थे, वायुमात्र के आहार से योगाभ्यास आरंभ किया। गोरखनाथ मीननाथ के सेवक हुए और कानपा हाडिफा (जालंधरनाथ) के। आदिनाथ शिव से गौरी ने आग्रह किया कि वे सिद्धों को विवाह करके वंश चलाने का आदेश दें। शिव ने

कहा कि सिद्धों में काम विकार नहीं है। तब गौरी ने परीक्षा ली। गौरी ने चारों सिद्धों को भुवनमोहिनी का रूप धारण करके भोजन परोसा। हाडिफा (जालंधरनाथ) ने ऐसी सुन्दरी का झाड़ूदार होने में भी कृतार्थ होने की आभिलाषा प्रकट की, फलस्वरूप मयनावती रानी के घर में झाड़ूदार होने का शाप पाया। हाडिफा (जालंधरनाथ) के पुत्र गाफूर सिद्ध ने इस सुन्दरी को पाने के लिए हाथ पैर कटा देने पर भी जीवन सफल माना और बदले में कामार्त सौतेली माँ से अपमान पाने का शाप मिला। संभवतरू यही चौरंगी नाथ हैं। बाद में गोरखनाथ के बताने पर ,गोपीचन्द के द्वारा मिट्टी में गड़वाये गये अपने गुरु हाडिफा (जालंधरनाथ) का उद्धार, उनके शिष्य कानपा ने किया।

धर्ममंगल शून्य पुराण में धर्मनिरंजन की कथा के अनुसार – जगत की सृष्टि होने के पहले विश्व अव्यक्त था। शून्य से बुदबुद रूप में ब्रह्माण्ड प्रकट हुआ। उसके बाद निरंजन आदिनाथ के रूप में अभिव्यक्त हुए। निरंजन देव के तप के ताप से केतका (मनसा) देवी उत्पन्न हुई। तपोलीन आदिनाथ केतका (मनसा) का स्मरण कर कामप्रवण हो गये। केतका के मुख से ब्रह्मा, ललाट से विष्णु और योनि से शिव उत्पन्न हुए। तीनों की परीक्षा हुई। बल्लुका नदी के तट पर तपरत आदिनाथ का तीनों दर्शन करने गये। परीक्षा के लिए आदिनाथ गलित शव के रूप में नदी में दिखे। ब्रह्मा शव गन्ध से दूर स्थित हो गये। विष्णु ने जल निक्षेप कर उसे और दूर किया, शिव ने दोनों को बुलाकर अपने जंघे पर शव का दाह संस्कार किया 1 ब्रह्मा अग्नि हुए, किन्तु विष्णु काष्ठ हुए। दह्यमान शव की नाभि से मीननाथ, ललाट अथवा जटा से गोरखनाथ, हाड़ से हाडिफा (जालंधरनाथ), कान से कानिपा और चरण से चौरंगीनाथ हुए। आदिनाथ के संकेत से शिव ने केतका (मनसा) को पत्नी के रूप में ग्रहण किया। जन्मान्तरित केतका का नाम गौरी था।

योगीराज कृष्णपाद– कृष्णपाद सिद्धयोगी जालंधरनाथ के शिष्य थे। इन्हें कण्हपा, कान्हपा, कानपा, कानफा, कृष्णवज्र, कर्णपा, कृष्णाचार्य, कर्णरिपा, काणेरीनाथ आदि नामों से भी जाना जाता है। राहुल सांकृत्यायन ने तिब्बती परम्परा के आधार पर इन्हें कर्णाटदेशीय ब्राह्मण माना है। शरीर का रंग काला होने के कारण इन्हें कृष्णपाद कहा गया है। महाराज देवपाल (809–849 ई.) के समय में यह एक पंडित भिक्षु थे और बहुत दिनों तक सोमपुरी बिहार[25] में रहा करते थे।चौरासी सिद्धों का वृत्तान्त नामक ग्रन्थ में इनका विशिष्ट वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ के अनुसार इनका नाम आचार्य कृष्णाचार्यपाद और जन्मस्थान सोमपुरी है।[26] चौरासी सिद्धों में कवित्व और विद्या दोनों दृष्टियों से ये सबसे श्रेष्ठ थे, इनके सात शिष्य चौरासी सिद्धों में गिने जाते हैं, जिनमें नखला और मेखला नाम की दो योगिनियाँ भी हैं।[27] डॉ. भट्टाचार्य ने इन्हें जुलाहा जाति में उत्पन्न और उडिया भाषी लिखा है।[28] जालंधरपाद से शिष्यत्व ग्रहण करने के पश्चात् इन्हें हेवज्र के देवमंडल का दर्शन हुआ। चर्यापदों में इन्होंने अपने को कापालिक कहा है। ये कापालिक और अघोरी संप्रदाय से जुड़े रहे हैं, परन्तु नाथ पंथ में इनका विशेष महत्त्व नहीं है।

महामहोपाध्याय पं. हरप्रसाद शास्त्री ने कृष्णपाद की 57 पुस्तकों तथा 12 संकीर्तन के पद प्राप्त होने की बात स्वीकारी है।[29] राहुल सांकृत्यायन के अनुसार कृष्णपाद के तनजूर (तन्जौर) में दर्शन पर छरू और तन्त्र पर चौहत्तर ग्रन्थ मिलते हैं।[30] दर्शन ग्रन्थों में कृष्णपाद ने शान्ति देवी के बोधिचर्यावतार पर बोधिचर्यावतारदुखबोधपद निर्णय नामक टीका लिखी थी। भाषा के आधार पर इनको श्रीविनयतोष जी भट्टाचार्य उडियाभाषी,[31] हरप्रसाद शास्त्री बंगलाभाषी[32] और राहुल सांकृत्यायन मगही[33] (बिहारी) भाषी कहते हैं। राहुल जी ने कान्हपादगीतिका, महाढुण्ढनमूल, वसन्ततिलक, असंबद्ध दृष्टि, वज्रगीति और दोहाकोष, बोद्धमान में दोहा कोष संस्कृत टीका सहित छापा है, जिसमें बत्तीस दोहे हैं।[34] इनकी रचनायें सती काणेरी और काणोरीपाव शीर्षक से संकलित हैं।[35]

नाथ पंथ के अन्य सिद्धों की भाँति ही कृष्णपाद के जीवन के सम्बन्ध में अनेक कथायें प्रचलित हैं जो निम्नवत हैं –

1. बंगला कवि फैजुल्ला रचित गोरखविजय और श्यामदास रचित मीनचेतन दोनों के कथानक में

साम्यता है। कथानुसार आद्य और आद्या ने पहले देवताओं की सृष्टि की इसके बाद चार सिद्धों की उत्पत्ति हुई। आदिनाथ के दह्यमान शव, जिसे शिव ने अपने जंघे पर जलाया था, के नाभि से मीननाथ, जटा से गोरखनाथ, हाड़ से हाडिपा तथा कान से कानिपा (कृष्णपाद) पैदा हुये–

कर्णहइते जन्मिल कानफा जुगाई।

अति खरकत हइल सिधाई।। (गोरखविजय)

इस ग्रन्थ में आगे वर्णित है कि गौरी ने चारों नाथों की परीक्षा लेने के लिए विश्वमोहिनी रूप धारण किया। कान्हपा (कृष्णपाद) विश्वमोहिनी के रूप से आकृष्ट होकर उसे पाने का निश्चय किया। देवी ने उन्हें डाहुका पंछी होने का शाप दिया।

2. संतयोगी ज्ञानेश्वर कृत योगिसम्प्रदायाविष्कृति ग्रन्थ में उन्हें श्रीमद्भागवत् में वर्णित प्रबुद्धनारायण के रूप में नवनाथों में से एक परिगणित किया गया है। उन्होंने प्रबुद्धनारायण योगेश्वर के रूप में राजा यदु को उपदेश दिया था, कि संसारी मनुष्य माया के पार किस तरह जा सकते हैं और कहा कि भागवत धर्म का आश्रय कर मनुष्य माया के बन्धन से मुक्त हो जाता है। कृष्णपाद के रूप में प्रकट होकर नाथ योग का रहस्य समझाया।

3. एक कथा के अनुसार हाथी के कान से कृष्णपाद पैदा हुये। एक दन्त कथा के अनुसार ब्रह्माजी को अपनी पुत्री सरस्वती की सुन्दरता देखकर कामविह्वल होकर वीर्यपात हो गया, वह वीर्य हिमालय के वन में स्थित एक हाथी के कान पर पड़ा। इससे प्रबुद्धनारायण का अवतार हुआ। जालंधरनाथ इस बालक को हाथी के पास से अग्नि देव और शिव के पास लाए। शिव जी ने बालक को आशीर्वाद दिया और जालन्धरनाथ ने बालक के कान में गुरु मन्त्र देकर अपना शिष्य बना कर बद्रीनाथ में दत्तात्रेय जी के पास ले गए। हाथी के कान से पैदा होने के कारण बालक का नाम कानिफानाथ रखा। बद्रीनाथ में कानिफानाथ सारी विद्यायें सीखकर पारंगत हो गये। सभी देवताओं को कानिफानाथ ने वस्त्र भेंट करके चरणों में प्रणाम किया। तब सब देवताओं ने कानिफानाथ को आशीर्वाद देते हुए वचन दिया कि हम लोग सदैव आप के साथ रहेंगे। जालंधरनाथ और कानिफानाथ ने मिलकर बीस लाख श्लोकों का ग्रन्थ तैयार किया। इस रचना से शिव बहुत प्रसन्न हुये। जालंधरनाथ कानिफानाथ को तप करने हेतु निर्देशित कर यात्रा पर चले गये।

कुछ दिनों बाद कानिफानाथ को यात्रा के दौरान गोरखनाथ से भेंट हुई, तब दोनों ने एक दूसरे के गुरु का हाल बताया। गोरखनाथ ने कहा कि तुम्हारे गुरु जालंधरनाथ को गोपीचन्द्र ने गड्ढे के नीचे दबा रखा है, और कानिफानाथ ने बताया कि मत्स्येन्द्रनाथ त्रियाराज्य में योग विद्या भूलकर कामवासना में फँसे हैं। दोनों अपने–अपने शिष्यों के साथ हाथी पर चढ़कर गोपीचन्द्र के राज्य में आये। कानिफानाथ योगी की आने की सूचना सुनते ही गोपीचन्द अपने दरबारियों के साथ जाकर उनको आदर सहित राजमहल में ले आये। महारानी मैनावती, जो जालंधरनाथ की शिष्या थीं, को पता चलते ही वे भी दरबार में आ गईं, चरणरज लेकर प्रणाम किया। मैनावती ने कहा कि योगीराज आज से बारह वर्ष पूर्व एक योगी जालंधरनाथ यहाँ आये थे। उन्होंने मेरी परीक्षा लेकर शिष्य बनाया था, परन्तु जब से गये हैं तब से उनके दर्शन नसीब नहीं हुये। रानी मैनावती की बात सुनकर कानिफानाथ बोले– माता! हम दोनों के गुरु जालंधरनाथ हैं। वह अब भी आपके राज्य की सीमा में हैं। मैं उन्हीं को ढूँढ़ता हुआ आपकी नगरी तक आया हूँ। राजा गोपीचन्द्र पास ही में बैठे थे। कानिफानाथ की बात सुनकर उनका मुख पीला पड़ गया। रानी ने कहा कि यह तो आश्चर्य है कि गुरु जी इसी नगरी में हैं और किसी को उनका पता नहीं है। कानिफानाथ बोले! माता जी आप के बेटे ने ही उनको छिपा रखा है। फिर गोपीचन्द्र की तरफ देखकर बोले, राजन अब तो बता दो कि उनको कहाँ छुपा रखा है? राजा गोपीचन्द्र की चोरी पकड़ी जाने पर बिना कुछ उत्तर दिये अपना सिर झुका लिये। रानी मैनावती आखों में आँसू भरकर बोलीं बेटा! शीघ्र बता, मेरे गुरु को कहाँ छिपा रखा है? मजबूर होकर गोपीचन्द्र ने सारा वृत्तान्त बताया और गिड़गिड़ा कर कानिफानाथ के कदमों में गिर गये और क्षमा याचना

करते हुए बोले – मुझसे बहुत बड़ा अपराध हो गया है। मेरे अपराध को क्षमा करके मुझ पर दया करो। रानी मैनावती ने भी क्षमा करने के लिये प्रार्थना किया। तब कानिफानाथ ने राजा गोपीचन्द्र के पाँच पुतले बनाये जो कि ताँबा, पीतल, सोना, चाँदी व लोहे के थे। पाँचों पुतलों को उसी स्थान पर रखवा दिया जहाँ जालंधरनाथ कैद थे। फिर शुभ मुहुर्त देखकर कानिफानाथ गोपीचन्द्र को उस स्थान पर लेकर पहुँच गए। कानिफानाथ ने पहला सोने का पुतला गोपीचन्द्र से रखवाया और उसके हाथ में कुदाल देकर गड्ढा खुदवाना प्रारम्भ कर दिया और कहा कि –नाम पूँछने पर तुरन्त गोपीचन्द्र कहकर बाहर भाग आना। चिरंजीवी मन्त्र की भस्मी गोपीचन्द्र के मस्तक पर मल दी। तब राजा ने गड्ढा खोदना शुरु किया। गड्ढें के अन्दर से आवाज आई –इस गड्ढें को खोदने वाला अपना नाम बताये। इसके उत्तर में राजा ने कहा – मैं गोपीचन्द्र हूँ महाराज! इतना कहकर राजा तीव्रा गति से बाहर भाग आया। राजा का नाम सुनते ही जालन्धरनाथ योगी ने क्रोधित होकर कहा गोपीचन्द्र भस्म हो जा। मुँह से यह शब्द निकलते ही सोने का पुतला भस्म हो गया। इसी तरह चारों पुतले योगी के श्राप से भस्म हो गये।

राजा ने पाँचवीं बार गड्ढा खोदना प्रारम्भ किया। पाँचवी बार गोपीचन्द्र का नाम सुनकर जालंधरनाथ सोचने लगे कि – मेरे क्रोध से ब्रह्माण्ड जल कर भस्म हो जाता है पर यह राजा गोपीचन्द्र अब तक भस्म क्यों नहीं हुआ? बड़े आश्चर्य की बात है। छठीं बार गड्ढा खोदने पर गड्ढा खाली हो गया। जालंधरनाथ ऊपर निगाह करके अभी देख भी नहीं पाये थे कि कानिफानाथ आगे बढ़कर बोले कि गुरु जी की जय हो। यहाँ आपका शिष्य कानिफानाथ आ पहुँचा है। जालन्धरनाथ ने कानिफानाथ को आशीर्वाद देकर अपने आपको बाहर निकालने की आज्ञा दी। काफी समय तक गड्ढे में रहने के कारण उनके शरीर पर मिट्टी जम गई थी और बड़े–बड़े घाव बन गए थे। तब जालन्धरनाथ ने शाक्रास्त्र मन्त्र का जप करके घाव ठीक कर लिया। कानिफानाथ गड्ढे में कूदकर अपने गुरु से गले मिले और उन्हें बाहर निकाला, जालन्धरनाथ से राजा गोपीचन्द्र को जीवन दान देने की प्रार्थना की, तब तक गोपीचन्द्र ने योगी के कदमों में अपना मस्तक टेक दिया था। जालन्धरनाथ ने गोपीचन्द्र को आशीर्वाद देकर माफ कर दिया। रानी मैनावती ने गोपीचन्द्र से कहा बेटा जो माँगना हो गुरुदेव से माँग ले। तब राजा गोपीचन्द्र दोनों हाथ जोड़कर बोले – महाराज! मैं वह पदार्थ नहीं बनना चाहता जो अग्नि लगने से नष्ट हो जाए। मुझे आप अपने जैसा ज्ञानी होने का वरदान दें। यह सुनकर जालंधरनाथ ने राजा को लंगोट बंधवा कर कानफाड़ मुद्रा पहनवाई और नाथ पंथ का वैरागी बनाकर भिक्षाटन करते हुए बद्रीनाथ जाने का आदेश दिया। कानिफानाथ एक तरफ अपने गुरु को गड्ढे से निकाला, दूसरी तरफ गोपीचन्द्र को अपने गुरु के श्राप से बचाकर उनकी कृपा पात्र बनाया।

उज्जैन के महाराजा भर्तृहरि– आज से दो हजार वर्ष पहले विक्रम की प्रथम शताब्दी से पहले उज्जैन के महाराजा भर्तृहरि थे, जिन्होंने नीतिशतक, शृंगारशतक, वैराग्यशतक तथा वाक्पदीयम् नामक विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की है। वह बहुश्रुत विद्वान तथा नीतिनिपुण राजा थे। विक्रमादित्य उनके छोटे भाई थे। महाराजा भर्तृहरि राजकाज कुछ विलासी हो गये थे। अपना अधिकांश समय रानी पिंगला के साथ ही व्यतीत करते थे। रंगारंग महफिल जमी रहती, चौसर के पांसे फेंके जाते, कविगण अपनी काव्यकला का प्रदर्शन करते रहते। एक घटना से राजा को ज्ञात हुआ कि अपनी रानी पिंगला जिस को वह प्राणों से भी अधिक प्रिय मानते हैं, जिसके प्रेमपाश में बंधकर वे राज्य के उत्तरदाायित्व से भी विमुख हो गये हैं, वही रानी किसी पर–पुरुष के प्रेम में रमी है। उनके मन को इस से बड़ा आघात लगा और जगत् के प्रति मन में वैराग्य जागृत हो गया। उन्हें तथ्यगत अनुभव हो गया कि जगत् में किसी का कोई नहीं। सबका अपना स्वार्थ है। उन्हें इस बात का ज्ञान हो गया कि विषय भोग में रोगी हो जाने का भय है। यदि शरीर में आसिक्त हो तो मृत्यु का भय है। शास्त्रीय पाण्डित्य में वाद–विवाद हो जाने पर पराजय का भय है। केवल वैराग्य ही एक ऐसा पदार्थ है जो सर्वभय विहीन है, फिर क्यों न वैराग्य का आश्रय लिया जाए। इसलिए राज–काज अपने छोटे भाई विक्रमादित्य को सौपकर महायोगी गुरु श्री गोरखनाथ से नाथ सम्प्रदाय की दीक्षा लेकर, सन्यासी हो गये।

जैन साहित्यों में भतृहरि के पिता का नाम गन्धर्वसेन उद्धृत है। कथानुसार गन्धर्वसेन का विवाह ताम्रसेन की कन्या महेन्द्रलेखा से हुआ था, जिससे विक्रमादित्य पैदा हुये थे। भर्तृहरि की उत्पत्ति मालिनी नामक दासी से बताया गया है। जैन साहित्य प्रबन्धचिन्तामणि तथा विक्रमचरित में उल्लेख है कि भानु विजय मुनि के विक्रमप्रबन्धरास के अनुसार कंचनपुर के हेमरस राजा तथा हेममाला रानी की पुत्री के पुत्र गन्धर्व सेन थे। वे बड़े सुन्दर थे, उन्हें देखकर स्त्रियां मतवाली हो जाती थीं। राजा ने उन्हें निर्वासित कर दिया। गन्धर्वसेन ने वन में निवास कर योगसिद्ध प्राप्त की। वे हेमवर्धन नगर में पहुंचे। वहाँ के राजा रत्नसेन और रत्नावली ने अपनी पुत्री का विवाह गन्धर्वसेन से कर दिया। गन्धर्वसेन की पहली रानी का नाम रूपसुन्दर था। उससे भर्तृहरि पैदा हुये। पद्मावती के गर्भवती होने पर रत्नसेन को ज्योतिषियों ने बताया कि तुम्हारा उत्तराधिकारी पद्मावती का पुत्र होगा। राजा ने उसको बुलवाया और होने वाले पुत्र को मारना चाहा। पद्मावती की परिचारिका चंद्रा मालिन ने आश्वासन दिया कि मैं तुम्हारे पुत्र को पहले से ही ले जाऊंगी और उसका पालन–पोषण करूंगी। वह उसे उज्जैन ले गयी। अब तक भर्तृहरि वहाँ के राजा थे। पद्मावती का पुत्र विक्रम, जो भर्तृहरि का सौतेला भाई था, कालान्तर में उज्जैन का राजा हुआ।

भर्तृहरि के जीवन चरित से सम्बन्धित एक और कथानक प्रचलित है। एक समय सूर्य और उर्वशी की एक दृष्टि हुई और सूर्य का काम वासना से विह्वल होने के कारण वीर्यपात हो गया। वायु ने उसका दो भाग कर दिया। प्रथम भाग, लोमश ऋषि के आश्रम आकर घड़े में गिरकर अगस्त ऋषि का निर्माण हुआ और दूसरा भाग, कौलिक मुनि के आश्रम में आकर गिरा। जब वे भिक्षा पात्र लिए दरवाजा बंद कर रहे थे। तब मुनि को पता चला यह सूर्य का वीर्य है। तब उन्हे ज्ञात हुआ कि कुछ समय पश्चात् धृमीन नारायण इस पात्र में संचार करेंगे। यह जान कर मुनि ने इस पात्र को मन्द्राचल की गुफा में संभाल कर रख दिया। काफी समय बीतने के बाद धृमीन नारायण का इस पात्र में संचार हुआ। और गर्भ बढ़ते–बढ़ते नौ महीने का हो गया। तब सूर्य के समान तेजस्वी बालक उसमें से निकला और विलख–विलख कर रोने लगा। उसी समय वहाँ की एक हिरणी के गर्भ से दो बच्चे पैदा हुये, उस हिरणी ने जब देखा तो तीसरा बच्चा भी दिखा। हिरणी ने उस बच्चे को चाटते हुए अपना दूध पिलाने लगी। कुछ दिन बाद वह बच्चा घुटनों के बल चलने लाग। हिरणी तीनों बच्चों को एक साथ छोड़कर नित्य घास चरने जाया करती थी। एक दिन चारों माँ–बेटे चरते हुए आम रास्ते पर आ निकले। उस रास्ते से एक भाट और उसकी पत्नी गुजर रहे थे। भाट का नाम जयसिंह और पत्नी का नाम रेणुका बाई था। उन दोनों ने जब जंगल में तेजस्वी बालक को देखा तब सोचने लगे कि इस बालक के माँ–बाप ने इसे जंगल में क्यों अकेला छोड़ दिया है। जयसिंह ने बालक को पकड़कर बोला कि–मैं तुम्हें तुम्हारे माता–पिता के पास पहुँचा दूँगा, तुम मुझे अपने घर का पता बताओ, परन्तु बालक रोता रहा, गूंगा समझ कर जयसिंह बच्चे को अपने घर ले आये। धीरे–धीरे बच्चा मनुष्यों की तरह खाना–पीना, हँसना, बोलना, चलना–फिरना सब सीख लिया।

जयसिंह और उनकी पत्नी रेणुकाबाई बच्चे को लेकर घूमते–घूमते काशी जा–पहुँचे। वहाँ पहुँच कर गंगा में स्नान करके, विश्वनाथ जी के दर्शन करने गये। शिवमूर्ति में से आवाज आई–आओ भर्थरी! अब अवतार लेकर प्रकट हो गये। बड़ा अच्छा किया। यह सुनकर जयसिंह समझ गया कि यह बालक कोई अवतारी है और बेटे का नाम भर्थरी रख दिया और काशी में ही रहकर अपनी दिनचर्या पूरी करने लगे। धीरे–धीरे भर्थरी अट्ठारह वर्ष के हो गये तब जयसिंह पत्नी के साथ भर्थरी को लेकर घर लौटने लगे। लेकिन रास्ते में डाकुओं ने जयसिंह को मार कर सारा धन लूट लिया। जयसिंह के वियोग में उसकी पत्नी रेणुका भी प्राण त्याग दी। तब भर्थरी दोनों का दाह संस्कार करके आगे बढे ही थे कि उसे रास्ते में कुछ बंजारे मिल गये, बंजारो ने भर्थरी से पूछा कि भर्थरी दुरूखी क्यों हो? तब भर्थरी ने रोते हुए अपना वृत्तान्त सुनाया। यह सुनकर बंजारों ने भर्थरी को दिलासा देते हुए समझाया कि अब रोने से कुछ नहीं होगा। तुम हमारे साथ रहो कुछ काम कर दिया करना और हम तुम्हे भोजन–कपड़े की व्यवस्था कर देगें। भर्थरी राजी होकर बंजारों के साथ रहने लगे।

कुछ दिनों बाद भर्थरी अवन्ती नगरी के निकट एक गाँव में बंजारों के साथ ठहरे। वहाँ अपना सामान ठीक से रखकर बंजारे आग तापने लगे। तभी वहाँ सियार जोर–जोर से चिल्लाने लगा। भर्थरी हिरणी के साथ जंगल में रहते–रहते जंगली जानवरों की काफी भाषा सीख गये थे! सियारों की बात समझ कर भर्थरी ने बंजारों से बताया कि सियारों का कहना है कि चोर हमें लूटने वाले हैं। भर्थरी की यह बात सुनकर बंजारे अपने अस्त्र–शस्त्र निकालकर अपनी हिफाजत कर लिये और चोरों को जख्मी करके भगा दिये। सुबह पुनरू सियार चिल्लाने लगे तब पुनरू बंजारों ने भर्थरी से पूछा कि– अब ये सियार क्या कह रहे हैं? तब भर्थरी ने कहा कि– ृशिवजी का एक बरदानी राक्षस उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा की ओर शीघ्र ही आ रहा है। उसके पास चार अनमोल रत्न हैं जो उसे मारेगा उसे ही वे चारों रत्न प्राप्त होंगे, जो उसके रक्त से नगर के फाटक पर अपने मस्तक पर तिलक लगायेगा, वही उज्जैनी का सार्वभौम राजा होगा। भर्थरी की इस बात को विक्रमादित्य छुपकर सुन रहे थे। विक्रमादित्य राक्षस को मारकर उसके खून से अपने वस्त्र भिगोकर मस्तक पर तिलक लगाया। राक्षस का वध होते ही उसे मुक्ति मिल गई और वह गंधर्व रूप धारण कर के स्वर्ग चला गया। विक्रमादित्य को राक्षस की मुट्ठी में से चार अनमोल रत्नों की प्राप्ति हुई। इसके बाद विक्रमादित्य ने राक्षस का रक्त नगर के फाटक पर लगाया और बंजारों की तरफ चले गये। युक्ति के द्वारा विक्रम भर्थरी को अपने कमरे में ले गये। घर पहुँच कर विक्रम ने अपनी माता सत्यवती को सारी घटना बताया, जिसे सुनकर सत्यवती बहुत प्रसन्न हुई। विक्रम ने अपनी माँ से कहा कि भर्थरी का पालन मेरे भाई जैसा होना चाहिये। तत्पश्चात विक्रम और भर्तृहरि दोनों भाई–भाई की तरह रहने लगे।

अवन्ती नगरी में विदर्भराज नाम का राजा राज्य करता था। उसकी पुत्री का नाम मदनलेखा था, जो अपूर्व सुन्दरी थी और अपने माता–पिता की अकेली सन्तान थी, राजा के बेटी की विवाह की चिन्ता हुई, तब प्रधान के सुझाव पर राजा ने बेटी को हाथी पर बैठाकर पूरे नगर में घुमाने का निर्णय लिया और कहा कि मेरी बेटी जिसे वरमाला पहना देगी उसी के साथ पुत्री का विवाह कर दिया जायेगा। सहेलियों से मंत्रणा करके राजकुमारी ने विक्रम के गले में वरमाला डाल दिया। राजकुमारी मदनलेखा का विवाह विक्रम के साथ कर दिया गया। विदर्भराज ने अपने दामाद विक्रम को अवन्ति का राज्य सौप दिया। विक्रम ने अपने भाई भर्थरी को अपना युवराज बनाया, सुभमती प्रधान ने अपनी पुत्री पिंगला का विवाह धूमधाम से भर्थरी के साथ कर दिया। इसके बाद भर्थरी ने लगभग बारह विवाह किया परन्तु इनकी पटरानी पिंगला ही थी। कुछ समय पश्चात् विक्रम भर्तृहरि को अपना राज्य सौप कर ईश्वर के भजन में लग गये। भर्तृहरि राज्य सम्भालने के बाद विलासिता में रहने लगे। कालान्तर में भर्तृहरि शिकार खेलते हुए एक हरिण का वध कर दिया। हरिणियाँ उनके पीछे लग गयीं। कहा जाता है कि वह हरिण गोरखनाथ का शिष्य था। हरिण का वध होते ही श्री गोरखनाथ जी तोरणमाला पर्वत से नीचे उतरे और भर्तृहरि से कहा कि तुमने मेरे शिष्य का वध क्यों किया। तब भर्तृहरि को अपने अपराध का आभास हुआ और वे श्री गोरखनाथ से उसे जीवित करने को कहने लगे। श्री गोरखनाथ ने थोड़ी सी धूनी का चूर्ण उस मृत हरिण पर छिड़क दिया। उनके आशीर्वाद और योगशिक्त से उसमें प्राण का संचार हो गया। भर्तृहरि ने श्री गोरखनाथ जी से शिष्य होने की इच्छा प्रकट की। श्री गोरखनाथ जी की प्रेरणा से भर्तृहरि ने रानी पिंगला से कहा कि तुम्हारे पातिव्रात का विश्वास होने पर ही मैं शिष्य बन सकता हूँ। पिंगला ने कहा कि जिसके पति की मृत्यु होने पर पत्नी की मृत्यु हो जाये यही पातिव्रात है। तब भर्तृहरि ने परीक्षा ली। शिकार में गये और खून से कपड़ा रंग कर महल में भेजवा दिया। रानी को विश्वास हो गया कि सिंह ने राजा के शरीर को अपना ग्रास बना लिया है, रानी ने अपने प्राणों का त्याग कर दिया। भर्तृहरि के लिए अपनी पटरानी का वियोग असह्य हो गया। वे रात–दिन श्मशान में निवास कर पिंगला का स्मरण करने लगे। महायोगी गोरखनाथ ने योगमाया प्रकट की, अपनी मिट्टी की डिविया पटक कर रोने लगे, भर्तृहरि ने समझाया कि मिट्टी का पात्र बनवा दूँ। श्री गोरखनाथ ने कहा कि तुम ऐसा नहीं कर सकते, पर मैं तुम्हारी स्त्री को जीवित अवस्था में तुम्हारे सामने प्रकट कर सकता हूँ। गुरु गोरखनाथ ने अनेक पिंगलाये प्रकट की भर्तृहरि ने कहा कि जिस योगविद्या से अनेक

पिंगलायें प्रकट हो सकती हैं, उसे ही ग्रहण करना श्रेयस्कर है। ऐसा विचार कर भर्तृहरि ने श्री गोरखनाथ से दीक्षा ले ली। योगदीक्षा लेकर भर्तृहरि तपस्वी का जीवन बिताने लगे और राज्य का परित्याग कर दिया।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह कथा पिंगला को व्यभिचारिणी सिद्ध करने से बचाने के लिए गढ़ी गयी है।

भर्तृहरि के जीवन की अनेकानेक कथाओं में एक तथ्य की साम्यता है कि राजा भर्तृहरि पिंगला को प्राणों से भी ज्यादा प्यार करते थे। राज्य पर शत्रुओं का भय उत्पन्न होने पर भी अपनी विलास–प्रियता से क्षणमात्र के लिए भी विमुख न हो सके। पिंगला के कहने पर भर्तृहरि ने विक्रम को राज्य से बाहर निकाल दिया। भर्तृहरि के इतना विलासी होने पर भी ृअमर फलश की परिघटना ने उनका जीवन ही बदल दिया। जो व्यिक्त आकण्ठ भोग–विलास में डूबा था वह एक क्षण में ही वैरागी हो गया।

अमर–फल की घटना निम्नवत है– एक योगी को घोर तपस्या के फलस्वरूप एक ऐसा फल प्राप्त हुआ, यह कोई साधारण फल नहीं था, एक ऐसा फल था जिसको खा लेने से व्यिक्त अमर हो जायेगा कभी भी कोई नहीं मरेगा और व्यिक्त के यौवन का भी क्षय नहीं होगा, वह सदैव जवान रहेगा। उस योगी ने सोचा कि मैं अमर होकर क्या करूंगा, इसे महाराज भर्तृहरि को दे देता हूँ वे इसे खाकर अमर हो जायेंगे, इससे प्रजा का पालन अच्छे से होगा तथा राज्य भी सुरक्षित रहेगा। यह सोचकर योगी ने वह फल राजा भर्तृहरि को दे दिया। योगी के जाने के बाद राजा भर्तृहरि ने सोचा पिंगला तो मेरे लिए प्राणों से भी प्यारी है यह फल खाकर उसका यौवन बना रहेगा। इसलिए यह फल राजा भर्तृहरि ने अपनी रानी पिंगला को दे दिया। इधर पिंगला फल पाने के बाद सोचने लगी कि अश्वशाला का अध्यक्ष उसे बहुत प्यार करता है और उसकी कामपिपाशा को शान्त करता है, इसलिए यदि यह फल उसे दे देगी तो वह सदैव जवान बना रहेगा। रानी ने वह फल अश्वशाला के अध्यक्ष को दे दिया। इधर अश्वशाला का अध्यक्ष एक वेश्या में आसक्त था। उसने उस वेश्या को अमरफल दे दिया। वेश्या ने विचार किया कि मेरा शरीर विषय सुख में आबद्ध है। दूसरे की काम वासना शान्त करने में मैं आज तक सहायक बनी रही, मेरे अमरफल खा लेने से असंख्य लोग पतित होंगे। इसलिए मैं यह फल प्रजापालक राजा भर्तृहरि को दे देती हूँ। अमरफल खाने के अधिकारी एकमात्र वही हैं। वैश्या ने राजमहल में जाकर वह फल महाराज को दे दिया। राजा भर्तृहरि उस फल को पहचान गये और उन्हें महारानी पिंगला पर बहुत क्रोध आया। वस्तु स्थिति को जानने के लिए उन्होंने अश्वशाला के अध्यक्ष एवं रानी पिंगला को भी दरबार में बुलाया। स्थिति स्पष्ट हो जाने पर उन्हें राज्य प्रासाद के वैभव त्रिशूल समान लगने लगे। शरीर में भयानक वेदना होने लगी। उनके मन में वैराग्य पैदा हो गया। उन्हें लगने लगा कि संसार में कोई भी किसी का नहीं है और अपना राज्य अपने भाई विक्रमादित्य को देकर खुद गुरु श्री गोरखनाथ से दीक्षा लेकर तपस्या करने चले गये। पहले वे पूरे भारत भर में घूमते रहे लेकिन कुछ समय बाद घूमते–घूमते देवास पहुँचे।

सिद्धयोगी नागनाथ– योगी नागनाथ नाथ पंथ के प्रमुख सिद्धों में एक हैं। कहा जाता है कि ये आज भी सूक्ष्म रूप से साधना रत हैं। कुछ सिद्ध संतों ने इनका दर्शन भी प्राप्त किया है। साधन–शिखर में स्वामीह शिवोमतीर्थ महाराज ने भी लिखा है कि नागनाथ उनके गुरुदेव पूजनीय विष्णुतीर्थ को दिखाई देते थे। गोरखसिद्धान्त संग्रह के अनुसार ये नवनाथों में आगणित हैं।

नागनाथ के जीवन चरित्र की कथा लोक में प्रचलित है। कहा जाता है कि सरस्वती के रूप सौन्दर्य पर मोहित होने पर ब्रह्मा का वीर्य स्खलित हुआ और उसका एक भाग तक्षक नाग की कन्या पद्मिनी के मस्तक पर गिरा, उसने उस वीर्य को चाट लिया, जिससे नागिन गर्भिणी हो गई। तब इस गर्भ में नारायणों में से एक नारायण अविर्होत्र नारायण ने प्रवेश किया। उसी समय राजा जनमेजय सर्प यज्ञ कर रहे थे, जिसमें सर्पों की आहुति दी जा रही थी। कहीं नागिन भी उस यज्ञ का शिकार न हो जाय यह सोचकर आस्तिक ऋषि ने उसे एक बरगद के पड़े के खोखल में छिपा दिया और मन्त्र के द्वारा उसकी सुरक्षा की व्यवस्था करके ऋषि हस्तिनापुर में जनमेजय के यज्ञ में सम्मिलित हुये। यज्ञ सम्पन्न हो जाने के पश्चांत्

नागिन ने एक अण्डा दिया और उस अण्डे से एक तेजस्वी बालक पैदा हुआ। कोशधर्म नामक निर्धन ब्राह्मण, जो उसी पेड़ के पत्तों से अपना जीविकोपार्जन करता था, भविष्यवाणी सुनकर उस पेड़ के खोखल से बालक को निकाला और अपनी पत्नी सुरादेवी को उसका पालन–पोषण के लिए दे दिया। आकाशवाणी के आदेशानुसार उस बच्चे का नाम वट सिद्ध नागनाथ रखा। ब्राह्मण की दरिद्रता उस बालक के घर में आ जाने से दूर हो गई। सात साल का हो जाने पर बालक का यज्ञोपवीत संस्कार करके विद्या अध्ययन में लगा दिया गया।

एक बार काशीविश्वनाथ मन्दिर के पास गंगा तट पर कुछ बालकों के साथ क्रीडा करते समय नागनाथ को दत्तात्रेय जी का अनुग्रह प्राप्त हुआ। दत्तात्रेय ने खेल–खेल में यह बताया कि वह जो भी इच्छा करेगा, वह वस्तु उसे प्राप्त हो जायेगी। इसका प्रयोग करके बालक नागनाथ अपने साथियों के लिए अच्छे–अच्छे भोजन एवं पकवान मंगवाकर खिलाता रहता, एक दिन देख लेने पर इन्होंने अपने माता–पिता को भी उसी तरह से भोजन कराये। इस प्रकार के अनेक चमत्कारों से उनके माता–पिता को यह विश्वास हो गया कि यह बालक कोई महापुरुष है। बालक से पूछने पर वह बताया कि यह दत्तात्रेय जी की कृपा का फल है। यह सुनकर ब्राह्मण ने बताया कि दत्तात्रेय जी का दर्शन होना बहुत कठिन है, यह अनेक जन्मों के पुण्य से ही प्राप्त होता है। यह सुनकर बालक नागनाथ घर त्यागकर दत्तात्रेय जी को ढूंढने निकल पड़े। ढूंढते–ढूंढते वे महाराष्ट्र के कोल्हापुर नामक स्थान में स्थित एक मन्दिर में भिक्षुक रूप में दत्तात्रेय जी का दर्शन प्राप्त किये। दत्तात्रेय ने बालक की इतनी अधिक भिक्त देखकर उसे हृदय से लगा लिया और उसके सिर पर हाथ फेरकर उसे मन्त्रोपदेश देकर, आत्मज्ञानी बना दिया। तत्पश्चात् दत्तात्रेय जी और नागनाथ काशी के लिए रवाना हुये। काशी में दत्तात्रेय ने बालक नागनाथ को शिव का दर्शन कराया। शिव ने नागनाथ को दीक्षा देकर नाथपंथ में दाखिल होने को कहा। दत्तात्रेय जी नागनाथ को छरू महीने तक काशी में रखकर सारी विद्याएँ, चौसठ कलायें तथा सारी साधनायें सिद्ध कराई। इसके पश्चात् दत्तात्रेय जी ने नागनाथ को बद्रिकाश्राम ले जाकर तपस्या करने के लिए बैठाया। यहाँ नागनाथ ने बारह वर्ष तक तप करके सभी देवताओं से वरदान प्राप्त किया। कालान्तर में दत्तात्रेय जी का आशीर्वाद प्राप्त करके, तीर्थयात्रा पर निकल पड़े।

तीर्थयात्रा करते हुए नागनाथ वालेघाट के जंगल में रहकर नाथयोग साधना में प्रवृत्त हुए। यहाँ पर उनके अनेक शिष्य हुए और शिष्यों ने एक योगमठ स्थापित किया। उसी समय भ्रमण करते हुए योगेश्वर मत्स्येन्द्रनाथ बड़वाल ग्राम आये और उन्हें नाथयोग सिद्धान्तों को बताया। अपनी कृपा से नागनाथ का साधनामय जीवन कृतार्थ किया। यहाँ तप करते हुए नागनाथ ने अनेक सिद्धियाँ प्राप्त की। यहीं पर इन्होंने संजीवनी विद्या प्राप्त की और अपनी शिष्य की पत्नी को, जो कि मृत हो गई थी, जीवित कर दिया। यहाँ पर ही नागनाथ की समाधिस्थली है। नागनाथ की साधना का विस्तृत वर्णन साधन शिखर नामक ग्रन्थ में भी प्राप्त होता है। इसमें देवास टेकड़ी पर नागनाथ की साधना का वर्णन किया गया है। स्वामी विष्णुतीर्थ महाराज ने इसका वर्णन करते हुए लिखा है कि देवास की टेकड़ी पर माता जी का स्थल देखकर नागनाथ मन्त्रमुग्ध हो गये। उन्हें वन प्रदेश की रमणीयता के साथ वहाँ माताजी की सूक्ष्म अलौकिक तंरगों के अतिरिक्त भर्तृहरि की आध्यात्मिक तंरगें भी अनुभव हो रही थीं। स्वामी विष्णुतीर्थ महाराज जी ने कहा कि योगी नागनाथ अत्यन्त उच्च कोटि के साधक थे। सिद्धियों के स्वामी, किन्तु उन सिद्धियों का अभिमान बिल्कुल नहीं। ऐसा कहा जाता है कि नागनाथ जी रात को दो बजे नित्य प्रति गंगा–स्नान के लिए जाया करते थे, अतरू उन्हें किसी ने कभी स्नान करते नहीं देखा। उन की गिनती नौ–नाथों में शुमार है।

किसी समय इनकी तपरूस्थली ज्वालामुखी (हिमाचल प्रदेश) रही है, जिससे ज्ञात होता है कि ये माताजी के अनन्य भक्त थे। इस कारण भी जब ये माता चामुण्डा जी की टेकड़ी पर आए तो यह स्थान एकदम इनके मन को भा गया।

सिद्धियाँ उसे ही प्राप्त होती हैं जिनका मन उनकी प्राप्ति के लिए नहीं लपकता। जो सिद्धियों की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं उन्हें केवल अस्थाई सिद्धियां ही उदय होती हैं। नागनाथजी ने कभी भी किसी सिद्धि हेतु साधना नहीं किया। उनकी साधना सदैव भगवान की कृपा प्राप्ति के लिए होती थी। सभी सिद्धियां उन्हें स्वभावतरू अनायास प्राप्त हुई, इसीलिए उन्हें सिद्धियों का अभिमान भी नहीं था।

प्रत्येक जीव में स्वभावतरू ही असंख्य सिद्धियाँ विद्यमान हैं। सिद्धि–संपन्न साधकों तथा सामान्य संसारी जीवों की आन्तरिक स्थिति एक समान है। सिद्धियां कहीं बाहर से आकर साधक में प्रकट नहीं होतीं, अपितु साधक की आन्तरिक स्वाभाविक स्थिति का प्रकटीकरण है। जब आन्तरिक स्थिति के प्रकटीकरण के लिए प्रयत्न किया जाता है तो वह अस्वाभाविक प्रयत्न होता है। जब साधन आत्म–स्थिति प्राप्ति निमित्त किया जाता है, किन्तु अनायास ही सिद्धियां प्रकट होने लगती हैं, तो उसे स्वाभाविक प्रकटीकरण कहा जाता है। योगी नागनाथ ऐसे साधक थे जिन्होंने न तो कभी सिद्धियों के लिए साधना किया, तथा न ही कभी उनका अनावश्यक प्रदर्शन किया।

योगी नागनाथ ने जब माता जी की टेकड़ी के दर्शन किए, उसी समय उन्होंने अपना मन बना लिया कि कुछ समय यहाँ रह कर साधनरत रहा जाए। माताजी की गुफा के सामने वाला स्थान, जहाँ भर्तृहरि प्रायरू बैठा करते थे, अपनी कुटियां के लिए पसंद कर लिया। कुटिया क्या थी? पत्तों से ढकी हुई एक मड़ैया। उनके साथ आए शिष्यों ने भी अपने–अपने लिए स्थान चुन लिया। किसी ने किसी गुफा में आसन जमा लिया, किसी ने किसी बड़े पत्थर की ओट का सहारा ले लिया, तो किसी ने छोटी सी मड़ैया छा ली। इस तरह यह साधन–शिखर एक आश्रम का रूप ग्रहण कर गया।

सिद्धयोगी गोपीचन्द– गोपीचन्द गौड़ बंगला के राजा माणिक चंद और उनकी पटरानीह मयनावती के पुत्र हैं। गोपीचन्द जालंधरनाथ के शिष्य हैं। माता मयनावती के उपदेश से इनमें वैराग्य उत्पन्न हुआ। ये ही सारंगी (गोपीतन्त्र) के आविष्कारक माने जाते हैं। इनके गीतों में नाथयोग की साधना तथा वैराग्य भाव सर्वत्र व्याप्त है। समय 11 वीं शताब्दी माना जाता है। आज भी भर्थरी साधु इनकी रचनाओं और ऐतिहासिक कालक्रम में इनकी कहानियों को गा–गा कर सारंगी बजाते हुये फेरी लगते हैं।

गोपीचन्द के पिता मानिकचन्द का सम्बन्ध पालवंश से बताया जाता है जो सन् 1095 ई. तक बंगाल में शासनारूढ़ थे। इसके बाद ये लोग पूर्व की तरफ हटने को बाध्य हुये। सिंध में गोपीचन्द पीर पटाव नाम से प्रसिद्ध हैं। पीर पटाव की मृत्यु सन् 1209 ई. में हुई। तुफ तुलकिरान में पीर पटाव की कहानी दी हुई है। यह कहानी गोपीचन्द को 12 वीं शताब्दी में निर्धारित करती है, परन्तु पीर पटाव गोपीचन्द थे या नहीं यह निश्चय पूर्वक कहना कठिन है।(नाथ संप्रदाय – डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 163) तिरुमलय शिलालेख से विदित है कि किसी युद्ध क्षेत्र में दक्षिण के शासक राजेन्द्र चोल ने मणिकचन्द के पुत्र गोविन्दचन्द को पराजित किया था। राजेन्द्र चोल का समय विक्रमी बारहवीं शती (1063 ई. से 1112 ई.) निर्धारित किया गया है।

गोविन्दचन्द को ही गोपीचन्द कहा जाता है। महाराष्ट्र की नाथपंथ परम्परा में गोपीचन्द को श्रीमद्भागवत के पंचम और एकादश स्कन्ध में वर्णित नव योगेश्वरों में से द्रुमिलनारायण का रूप स्वीकार किया गया है। नाथ सिद्ध वन्दना में उन्हें ब्रह्मानन्द स्वरूप कहकर नमस्कार किया है। विक्रमी सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में लोकमानस में मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ और भर्तृहरि के साथ योगिराज गोपीचन्द की परिगणना होती है। उस समय के महाकवि तथा दिल्लीश्वर शेरशाह के समकालीन मलिक मुहम्मद जायसी ने अपने पद्मावत प्रबन्धकाव्य में गोपीचन्द के नाम का जो उल्लेख किया है, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जायसी से कई सौ साल पूर्व से ही लोकमानस में योगिराज गोपीचन्द का नाम शीर्षस्थानीय होता चला आ रहा था। जायसी ने लिखा है कि यदि राज्य और भोग–विलास अच्छे होते तो राजा गोपीचन्द उन्हें त्यागकर योग की साधना क्यों करते–

जौ भल होत राज औ भोगू।

गोपीचन्द नहिं साधत जोगू।।(पद्मावत जोगी खंड–5)

जायसी केवल नव नाथों ही नहीं अपितु चौरासी सिद्धों के बारे में भी लिखते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है नवनाथ लोक मानस में जायसी के बहुत पहले बहुश्रुत है।

सिद्धयोगी गोपीचन्द के सम्बन्ध में अनेक कथायें प्रचलित हैं

सिद्धयोगी चौरंगीनाथ– नवनाथों की प्रायरू प्रत्येक सूची में सिद्धयोगी चौरंगीनाथ का नाम आगणित है, गोरखनाथ जी के गुरुभाई[36] और मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य हैं। किंवदंती है कि इनकी विमाता ने इनके हाथ–पर कटवा दिये। पंजाब एवं अफगानिस्तान में इनकी कहानी पूरनभगत के नाम से प्रसिद्ध है। तिब्बती मत के अनुसार ये राजा देवपाल के पुत्र हैं। इनकी एक रचना पिण्डी के जैन ग्रन्थ भण्डार में सुरक्षित है जिसका नाम –प्राणसंकलीश्श है।[37] इसमें इन्होंने अपना जीवन–वृत्तान्त लिखा है। भाषा से ये पूर्व देशीय मालूम होते हैं। एक अन्य मत के अनुसार चौरंगीनाथ बिहार प्रदेश के शाहबाद जिले के चनपुर गाँव (भभुआ प्रमंडल) के थे, जहाँ शालिवाहन का खण्डहर है।[38] स्यालकोट में उस कूँए का दर्शन आज भी कराया जाता है, जहाँ इनका हाथ–पैर काटकर डाला गया था। कंदली मंजुनाथ माहात्म्य में पुष्पुर नगर के राजा महाबल के आप पुत्र बताये गये हैं।[39] पूरन भगत की कथानुसार ये राजा रसाल वैमात्रेय के भाई थे। चौरंगीनाथ की रचनायें नाथ सिद्धों की बानियाँ में संग्रह में प्रकाशित हैं।

चौरंगीनाथ की जीवनी के बारे में उनके ग्रन्थ प्राणसंकली में विवरण प्राप्त होते हैं। ग्रन्थ के अनुसार – योगी चौरंगीनाथ का जन्म स्यालकोट के राजा सालबाहन (शालिवाहन) के पुत्र के रूप में हुआ था। ये मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य और गोरखनाथ के गुरु भाई हैं। इनकी विमाता ने इनके हाथ पैर कटवा दिये थे। ये ही पंजाब की लोक कथाओं के पूरनभगत हैं। प्राणसंकली के अनुसार यह सिद्ध भी हो जाता है। चौरंगीनाथ ने स्वयं ही लिखा है –

सत्यं बदंत चौरंगीनाथ आदि अन्तरि सुनौ वृतांत

सालबाहन घरे हमारा जनम उतपति, सतिमां झुट बोलीला।।1।।

ई अम्हारा भइला सासत, पाप कलपना नहीं हमारे मने,

हाथ पांव कटाय रलाइ लायला निरंजन बने,

सोष सन्ताप मने परभेव सनमुख देवीला

श्री मछंद्रनाथ गुरुदेव, नमस्कार करीला, नमाइला माथा।।2।।

आसीरबाद पाइला अम्हे, मने भइला

हरषित होठ, कंठ तालूका रे सुकाईला

धर्मना रूप मच्छंद्रनाथ स्वामी।।3।।

मन जानै पुण्यपाप, वचन न आवै मुणै बोलब्या कैसा हाथ

रे दीला फल मुषे पीलीला, ऐसा गुसाई बोलीला।।4।।

जीवन उपदैस भाषिला फल आदन्हे बिलासा

दोष बुध्या त्रिषा विसारिला।।5।।

नहीं मानै सोक धन धरम सुमिरिला, अम्हे भइलासचेत

के तुम्ह कहारे बोले पुछीला।।6।।

इन पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि इनके पिता सालबाहन, गुरु मत्स्येन्द्रनाथ हैं और इनकी विमाता ने अनेक कष्ट देते हुए इनके हाथ–पाँव कटवा दिया था। दूसरा पक्तियों की भाषा पूर्वी है। यदि प्राणसंकली सचमुच चौरंगीनाथ की रचना है तो इसका स्थान पूर्वी प्रदेश मानना पड़ेगा। चौरंगीनाथ को ज्ञानस्वरूप, पूरुख सिंह, सिंगारी और पूरन भगत नाम से अभिहित किया जाता है। पूरन भगत नाम से चौरंगीनाथ की जीवनी मियां कादरयार की कहानी ृसंग पूरन भगतश्श में विस्तृत रूप से प्राप्त होती है।

सिद्ध योगी चर्पटीनाथ– चर्पटीनाथ गोरखनाथ के शिष्य थे। तिब्बती परम्परा में इन्हें मीनपा का गुरु माना जाता है। मीन चेतन में इन्हें ही कर्पटीयनाथ कहा गया है। कुछ रचनाओं में इन्हें गोपीचन्द का भाई बताया गया है। प्रारम्भ में इनको रसेश्वर संप्रदाय से संबंधित होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। ये गहनीनाथ के गुरु भाई भी बताये जाते हैं। रज्जवदास के एक पद के आधार पर इनको राजपुताना का निवासी माना जाता है। ये जाति के ब्राह्मण थे। इन्हें चरपटीनाथ, चर्पटीया, पचरीया, चपटी, कर्पटीनाथ आदि नामों से जाना जाता है। इनके शिष्यों में राघनाथ, बालनाथ, तोटनाथ, जांमुनाथ, नित्यानाथ, सारेंद्रनाथ, काकुत्सनाथ और भैरवनाथ हैं। गोरखनाथ की कौपीन या कर्पटी से इनकी उत्पत्ति होने के कारण इनका नाम चर्पटीनाथ पड़ा।

नवनाथों की सूची में चर्पटीनाथ की गणना किया जाता है। इन्होंने रस सिद्ध किया था। अनेक नाथ पंथी सिद्धों के लिखे हुए रस–ग्रन्थ आज भी वैद्यों में प्रचलित हैं। कहा जाता है कि इस रस सम्प्रदाय का मत आदिनाथ शिव के द्वारा बताया गया था और आदिनाथ चंद्रसेन, नित्यानन्द, गोरक्षनाथ, कपालि, भालुकी, माण्डव्य योगियों ने योगबल से इसकी स्थापना की थी।[40] बाद में नागार्जुन, नित्यनाथ, शालिनाथ, चर्पटनाथ ने आयुर्वेद शास्त्र के अनेक ग्रन्थ लिखे। चर्पटनाथ रस सिद्ध योगी थे। गोरखनाथ अथवा गुरु नानकदेव के द्वारा विरचित प्राणसंकली नामक ग्रन्थ में चरपटनाथ और गुरुनानक देव से बातचीत के रूप में विविध रसायनों का उल्लेख है। संभव है गुरु गोरखनाथ की प्राणसंकली कोई बड़ी पुस्तक थी, यह ग्रन्थ उसी के अनुकरण पर लिखा गया है।[41] इसलिए यह स्पष्ट हो जाता है कि चर्पटीनाथ रसेश्वर मत के सिद्ध थे।

चर्पटीनाथ ने भेष के योगी को अधिक महत्त्व नहीं दिया है, अपितु आत्मा के योगी कहलाने को ही महत्त्व दिया है।[42]

सन्दर्भ

1. (योगिसंप्रदायाविष्कृति, चन्द्रनाथ योगी, अहमदाबाद– 2019, पृ. 11–14)
2. (सुधाकरचन्द्रिका –पदुमावती–बिब्लोधिका इन्डिका, न्यू सीरीज नं. 1172 – जी. पी. ग्रियर्सन और सुधाकर द्विवेदी द्वारा सम्पादित, कलकत्ता 1907, पर म. म. पं. सुधाकर द्विवेदी की हिन्दी टीका पृ. – 241)
3. (नाथ सम्प्रदाय – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, सं. – 2012, पृ. 25–26)
4. (नारद पुराण उत्तर 17 / 23)
5. (ज्ञानेश्वरी –18/ओ.बी.175,1ध्58)।
6. (नेपाल कैटलॉग – 2 य भाग, पृ. ग्प)
7. (नाथ संप्रदाय– डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदुस्तान एकेडमी इलाहाबाद सन 2012, पृष्ठ 38)
8. (तन्त्रालोक टीका– जयद्रथ, पृष्ठ –24)
9. (नाथ संप्रदाय – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 45)
10. (बंगला साहित्य के इतिहास – सुकुमार सेन, पृष्ठ 937)

11. (गोरखनाथ एंड दी कनफटा योगीज–ब्रिक्स, पृष्ठ 228)
12. (विलियम क्रुक, कोलकाता सं. 1869 , पृ. 153)
13. (ग्रियसेन पृ 228)
14. (गोरखनाथ एण्डकनफटायोगी पृ229)
15. (योगी सम्प्रदाय वि. कृतिः चन्द्रनाथ योगी, अहमदाबाद सं. 1924 पृ 23)
16. (नाथ सम्प्रदाय हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ .97)।
17. (व्रिग्स पृ.211)।
18. गंगा पुरातत्त्वांक में श्री राहुल साहत्यायन के लेख – पृ. 252
19. वहीं पृ. 253
20. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. 77
21. वहीं
22. गोरखनाथ एण्ड द कनफटा योगीज – ब्रिग्स, पृ. 67
23. (गोरखनाथ एंड कनफटा योगीज–ब्रिक्स पृ. 67 –69)
24. (नाथ संप्रदाय–डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 8)
25. सोमपुरी बिहार (पहाड़पुर, जिला – राजशाही, बंगाल)
26. (गोरखनाथ और नाथ सिद्ध – डॉ अनुज प्रताप सिंह, पृष्ठ 131)
27. गंगापुरातत्त्वांक – राहुल सांकृत्यायन 254
28. साधनमाला गायकवाड़ ओरियण्टल सोसायटी सीरीज सं. 26 और 41 बड़ौदा द्वितीय भाग प्रस्तावना पृ. 53
29. नाथ सम्प्रदाय, हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ.80
30. गंगापुरातत्त्वांक – राहुल सांकृत्यायन, पृ. 254
31. साधनमाला – गायकवाड ओरयण्टल सीरीज पृ. 43
32. बौद्धगान ओदोहा (बगला में मुद्रित, पं. हरप्रसाद शास्त्री, सम्पादन, 323 बंगाबद,कलकत्ता
33. गंगा पुरातत्त्वांक – राहुल सांकृत्यायन पृ. 254–55
34. नाथ सम्प्रदाय – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. –80
35. गोरखनाथ और नाथ सिद्ध – डॉ. अनुज प्रसाद सिंह, सं. 2019, पृ. 131
36. गंगापुरातत्त्वांक – राहुल सांकृत्यायन, पृ. 260
37. नाथ सम्प्रदाय – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. – 137
38. हिन्दी साहित्य और बिहार – भाग – 1, पृ. 12
39. कंदली मंजुनाथ माहात्म्य, अध्याय – 20
40. आयुर्वेद परिचय, विश्व विद्या संग्रह, शान्ति निकेतन 1350 बंगाबद पृ. 12–13।

41. नाथ सम्प्रदाय – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी – पृ. 175

42. डॉ. मोहन सिंह की हस्तलिखित पुस्तक, पंजाब यूनिवर्सिटी लइब्रेरी की 374 नं. पुस्तक के परिशिष्ट पृ. – 20 से चर्पटीनाथ की कविता।